अध्याय - ११

श्रमनीति

औद्योगिक सम्बन्ध

— भारतीय मजदूर संघ

प्रस्तावना

राष्ट्रीय श्रम आयोग को भारतीय मजदूर संघ द्वारा प्रस्तुत किये गये "LABOUR POLICY" नामक अंग्रेजी पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है।

इस पुस्तक के सभी २० अध्याय अलग-अलग पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किये गये हैं।

आपात्कालीन स्थति के अन्तर्गत कारावास की अवधि में इस अध्याय का अनुवाद आई० आई० टी० कानपुर के प्राध्यापक डा० भूषणलाल धूपड़ के सहयोग से किया गया है।

हम उनके प्रति अपना आभार प्रकट करते हैं।

-रामनरेश सिंह

भाग २

अध्याय ११

प्रोत्साहन, प्रेरणा व उत्पादकता

आधार भूत विषय

किसी भी समाज के जीवन स्तर को उठाना अधिक उत्पादकता पर निर्भर करता है। उत्पादकता की बढ़ोत्तरी से आर्थिक प्रगति व कल्याण होता है। लम्बे काल तक किसी भी प्रकार का आर्थिक चमत्कार इस तथ्य को बदल नहीं सकता। आर्थिक उत्थान के लिये इसके अलावा कोई छोटा मार्ग (Short-cut) नहीं है। केवल मात्र उत्पादकता के दर को अधिक बढ़ाने से ही आर्थिक उत्थान हो सकता है। किसी भी आर्थिक अथवा सामाजिक पद्धति की लम्बी अवधि में जीत केवल मात्र उत्पादकता बढ़ोत्तरी पर ही निर्भर करती है। इस प्रकार इसकी (उत्पादकता की) महत्ता है। जो भी ट्रेड यूनियन अथवा कर्मचारियों के संगठन उत्पादकता के दर की बढ़ोत्तरी के लिये पूरे जी जान से खड़े नहीं होते, वे या तो आराम से गद्दी पर बैठ कर राजनीति करने या नारेबाजी करने वाले राजनातिज्ञों के जमघट के रूप में होगे अथवा पूर्ण रूपेण राष्ट्र विरोधी समूह। किसी भी दशा में ऐसे समूह आर्थिक उत्थान और राष्ट्र को आगे बढ़ाने की गति में एक बाधा स्वरूप हैं और वे देश और जनता की अन्तरात्मा के वास्तविक समर्थन का दावा नहीं कर सकते, चाहे उनकी संख्या बल कितनी भी क्यों न हो अथवा किसी भी उद्योग में उसको कोई भी स्थान प्राप्त हो अथवा विशेष भर्ती के कारण हो या ऐतिहासिक प्रक्रिया के अवसरों

के कारण हो अथवा लोगों की अनभिज्ञता का दुरुपयोग करने या राजनीतिक प्रेरणा के कारण हो। अतएव हमारा यह दृष्टिकोण हैं कि सभी राष्ट्रवादी तत्वों को एक साथ कदम मिलाकर चलना चाहिये। इस सम्बन्ध में शेष विवेचन तो केवल मात्र तकनीकी ही हैं।

भारत के उत्पादकता आन्दोलन की प्रगति के बारे में हमें दो प्रमुख टिप्पणियां करनी हैं। सर्व प्रथम यह हमारी स्पष्ट राय है कि सार्वजनिक व निजी दोनों ही क्षेत्रों में प्रबन्धकों ने उत्पादकता आन्दोलन को अभी तक गम्भीरता से नहीं लिया है। बहुत कम ऐसे कारखाने हैं, जहां दिन प्रतिदिन की कार्यवाही में एक अच्छी उपकरण प्राप्त वर्क स्टडी इकाई रखी जाती है और सम्मानित की जाती है। यह भी कोई असाधारण बात नहीं होगी जिसमें कि ऐसे प्रबन्धक कारखानों में मिल सकते हैं, जो 'उत्पादकता' अथवा 'वर्कस्टडी' के शब्दों के अर्थ भी नहीं जानते। पेशेवर प्रबन्धकों के समुदाय में ही कुछ लोग ऐसे हैं, जो राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद की गतिविधियों से सम्बन्धित हैं और जिन्हें विषय के बारे में कुछ जानकारी है। फिर भी राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद की बैठकों में उन्हें कुछ तकनीकी शब्द सीखने मात्र का अवसर प्राप्त हुआ है, जिससे वे कार्यालयों के काम में उन शब्दों का प्रयोग कर सकें ताकि ऐसा प्रतीत हो कि वे भिन्न-भिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में एक उच्चस्तरीय व्यवसायिक दृष्टिकोण रख रहे हैं। इतना ही नहीं इसके 'संगठन और पद्धति' के लिये एक साधारण सेल मात्र ही बना कर छोड़ दिया गया है और सार्वजनिक क्षेत्र के कारखानों में कर्मचारियों के सुझाव को काट छांट करने के लिये इस सेल का प्रयोग किया जाता है। उच्चस्तरीय अधिषासी वर्ग और वरिष्ठ अधिकारियों ने अभी तक उत्पादकता के विचारों को पूर्णरूपेण समर्थन नहीं दिया है तथा उद्योगपति और वित्तीय व्यवस्था करने वाले अथवा पूंजीपति व राजनीतिज्ञ जो औद्योगिक गतिविधियों के मालिक या नियन्त्रक हैं, लगभग इस विषय में कोई भी विशेषज्ञता नहीं प्राप्त किये हैं। भारतवर्ष में प्रशासन का स्तर तो करीब-करीब सभी स्थानों पर बहुत खराब है। उपयोगी शोध की भी यही स्थिति है और भारतीय प्रयोगशालाओं में जो कुछ थोड़ा बहुत अच्छा शोध होता भी है तो प्रशासकों द्वारा उसकी कीमत नहीं आंकी जाती। हर दिशाओं में बाबूगिरी की मनोवृत्ति हमारा पीछा कर रही है। नई दिल्ली में दि० २५ अप्रैल से २ मई, १९६७ तक हुये विचार गोष्ठी जो अफ्रीका व एशियाई देशों में विज्ञान व तकनीकी के प्रोत्साहन और उपयोग हेतु आपसी सहयोग के लिये संगठित की

गयी थी, में प्रस्तुत एक पर्चे (विषय) में प्रो पी० सी० महालोनबीस ने कहा कि भारत में विश्वविद्यालयी स्तर के शिक्षा प्राप्त वैज्ञानिक और इन्जीनियर्स की समूची संख्या का अनुमान २ लाख १५ हजार है, (वर्ष १९६३ में इनमें १ लाख ८ हजार वैज्ञानिक हैं, ८० हजार इन्जीनियर हैं और २७ हजार कृषि वैज्ञानिक हैं)। उन्होंने बताया कि यह संख्या यू० एस० ए०, रूस, इङ्गलैंड और जापान को छोड़कर शेष सभी प्रगतिशील देशों से अधिक है। यदि डिप्लोमास्तरीय व्यक्तियों को सम्मिलित कर लिया जाय तो यह संख्या ६ लाख के करीब होती है, जो आकड़ों के हिसाब से भारत को एक बहुत ही प्रशंसनीय स्थान प्रदान करती है। भारत में 'शोध और विकास' के लिये हो रहे खर्चे का अनुपात सबसे अधिक है। समूचे देश के राष्ट्रीय उत्पाद को आधार मानकर आर० एण्ड डी० पर खर्चे का वह भाग जो असैनिक शोध पर हुआ है और जिसे आम तौर पर रिसर्च रेशो (Rescares Ratio) कहते हैं ०.३३ है। अन्य देशों में यह अनुपात निम्नलिखित हैं : आस्ट्रेलिया ०.१६, स्विटजरलैंड ०.२१, कनाडा ०.२६, स्वीवडन ०.२७, यू० एस० ए० ०.३१, नार्वे ०.३७, वेलजियम ०.३८, पश्चिमी जर्मनी ०.३६,नीदरलैण्ड ०.४५, जापान ०.४७ और इङ्गलैंड ०५३। विद्वान लेखक ने माना है कि भारत में आर० एण्ड डी० पर इतनी मात्रा में खर्चे के पश्चात भी इसकी आर्थिक प्रगति पर प्रभाव लगभग नगण्य ही है, इसने न ही उत्पादकी गुणवत्ता में सुधार के लिये योगदान दिया है और न ही कीमतों में कमी लायी है। शोध वैज्ञानिकों में अपने शोध पत्र छपवाने की होड़ लगी हुई है और एक प्रकार की प्रचार प्रसिद्धि तथा पदोन्नति पाने की मनोवृत्ति धारण की हुयी है। योजनाबद्ध लाभ प्रदान करने वाले शोध के लिये भी खर्चे व लाभ के विवेचन हेतु भी कोई रुझान नहीं है। बाबूगिरी और राजनीतिज्ञों की मनोवृत्ति शोध जैसे गम्भीर विषयों में अपना प्रभाव बढ़ा रही है। क्या हम कह सकते हैं कि यह उन तथ्यों के कारण हैं, जिसको केन्द्रीय सरकार की प्रक्रियाओं के लिये बाबू और राजनीतिक लोग प्रदान करते हैं ? नई दिल्ली अथवा केन्द्रीय सचिवालय का वातावरण और ससदीय भाषणों का स्तर इसी निर्णय की गवाही देता है। उत्पादकता के लिये उच्च स्तर पर सभी लोगों में चिन्ता पैदा की जानी चाहिये। केन्द्रीय सरकार की सेवाओं के दृष्टिकोण और उच्चस्तरीय अधिपासी वर्ग और प्रशासकों के दृष्टिकोण में एक क्रान्तिकारी दिशा लायी जानी चाहिये, यदि राष्ट्रीय स्तर पर उत्पादकता की योजनाओं को सफल बनाना है तो। उत्पादकता स्तरों में भारी परिणाम में लाये गये अथवा लाये जाने वाले विषयों और

समस्याओं पर संसद सदस्यों के योगदान का निर्भीक और स्पष्ट परीक्षण के लिये एक सार्वजनिक सतर्कता समिति होनी चाहिये। और इस प्रकार परीक्षण के फलों को जन समुदाय के मत बनाने के लिये प्रचार करना चाहिये, जिसके परिणाम स्वरूप जनता अपने चयन में मार्गदर्शन प्राप्त करे कि राष्ट्र के भाग्य को बनाने के लिये किन लोगों का न्यास (ट्रस्ट) बनाया जा सकता है। राष्ट्र के समूचे वातावरण के राजनीतिक और नकारात्मक मान्यता को बदल कर आर्थिक और रचनात्मक मान्यताओं में लाना चाहिये, जो कि वैज्ञानिक दृष्टि-कोण और प्रकृति से प्रेरित हों तभी हम वर्तमान सेवाओं में उपस्थित बाबूगिरी और राजनीतिक दिशा को बदलने में सफल हो सकेंगे। आजकल तो गुजरात का परम्परागत व्यापारी समुदाय भी बाबूगिरी की ओर जा रहा है। गुजरात विश्वविद्यालय द्वारा किये गये 'रोजगार सर्वे' पर प्रो० जे० डी० ढलोकिया बताते हैं कि गुजरात विश्वविद्यालय से निकले हुये ८२.२ प्रतिशत आर्ट्स ग्रैज्युएट, ७२.८ प्रतिशत विज्ञान स्नातक और ७१ प्रतिशत वाणिज्य स्नातक क्लर्क के रूप में काम कर रहे हैं। अनुत्पादक व्यवसायों में प्रबुद्ध लोगों की इस प्रकार लगने अर्थात् क्षय हो जाने को अपराधी माना जाना चाहिये। अब तो स्वभाव में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने का विषय ही शेष है।

उत्पादकता के विषय में हमारे विचार और व्यवहार में द्वितीय प्रकार का गम्भीर दोष यह है कि हम श्रम उत्पादकता पर बहुत अधिक आग्रह करते हैं और भूमि तथा पूंजी की उत्पादकता के बारे में सब कुछ भूल जाते हैं। श्रम उत्पादकता एक ऐसी गतिविधि है, जो सम्पत्ति के वितरण में लाभदायक हो सकती है, परन्तु भारतीय परिस्थितियों के अन्तर्गत भूमि और पूंजी से सम्बन्धित उत्पादकता बहुत आवश्यक है, क्योंकि यह राष्ट्रीय आय के विकास की दर को अधिकतम गति से प्रभावित कर सकती है, इन दोनों में पूंजी की उत्पादकता बहुत ही प्रमाणिक है। देश में इकत्रित की गयी बचत और साधनों के भंडार के उपयोग जो हम कर सकते हैं, अधिकतम करना चाहिये, क्योंकि वे पदार्थों और सेवाओं के वर्तमान और भविष्य के प्रवाहों में योगदान देते हैं। भारत में इस पहलू को अपराधी स्तर तक दुर्लक्ष्य किया जा रहा है। हमारे पास निर्भर की जाने वाली पूंजी और उसके द्वारा उत्पन्न होने वाले प्रमुख उत्पाद के अनुपात के संख्या पत्र भी नहीं हैं और न देश की सांख्यकीय गणना करने वाले निपुण वर्ग ने भविष्य के वर्षों के लिये पदार्थों व सेवाओं के उत्पादन की सहायतार्थ पूंजीगत सम्पत्ति की भौतकीय उत्पादकता के माप हेतु कोई गम्भीर

प्रयत्न ही किये हैं। सांख्यकीय गणना के विशेषज्ञों को यह जानकारी है कि किस प्रकार राष्ट्रीय आय की परिभाषा और माप को वैचारिक और व्यावहारिक कठिनाइयां घेरे हुये हैं। इन परिस्थितियों में हमें यह जानकारी है कि राष्ट्रीय स्तर पर पूंजी-आय के अनुपात के आधार पर अपनी प्रस्तावना किस प्रकार सिद्ध कर सकते हैं अथवा विवाद-ग्रस्त बना सकते हैं। हम अपने दृष्टिकोण को समझाने के लिये उत्तर भारत के सुगर के कारखानों का एक उदाहरण प्रस्तुत करेंगे, जहाँ पर सरकार ने कारखानों को लाइसेन्स प्रदान करने में अत्यधिक हस्तक्षेप किया है और पूंजी और विदेशी मुद्रा के भारी खर्चे को उठाया है और यह हमारी यूनियन्स द्वारा दी गयी चेतावनी के पश्चात भी किया गया। इसके परिणाम स्वरूप बाजार से चीनी गायब हो गयी और २ वर्ष की ही अवधि में इसकी कीमतें चार से पांच गुने बढ़ गयीं।

एक उदाहरण

इन्डियन सुगर इन्डस्ट्री रिसर्च इन्स्च्यूट जो भारतीय मजदूर संघ द्वारा स्थापित भारतीय श्रम अन्वेषण केन्द्र की एक शाखा है, के निदेशक श्री ठाकुरदास साहनी ने भारतीय सेन्ट्रल सुगर केन कमेटी की शाखा केन डवलमेन्ट सब कमेटी की फरवरी १९६५ की बैठक में चीनी उद्योग में भूमि और पूंजी उत्पादकता पर एक योजना प्रस्तत की। हमारे निदेशक के सुझाव पर विस्तार से विशेषज्ञों द्वारा तर्क-वितर्क व विचारविमर्श करने के पश्चात् समिति ने प्रस्तुत योजना को सर्वसम्मति से अनुमोदित किया और सरकार के पास इसकी स्वीकृति के लिये सिफारिश की कि इस योजना को इसके नमूने के तौर पर कार्यान्वित किया जाय। परन्तु सरकार ने इस संदर्भ में कुछ भी नहीं किया। तथा इसके विपरीत वह गलतियां ही करती रही तथा पूंजी को बरबाद करके उद्योग के विकास को रोके रखा। तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्त में केन्द्रीय खाद्य व कृषि मत्री ने लाइसेन्स व ऋण प्रदान करने की घोषणा की, ताकि २०० करोड़ रुपये की पूंजी लगाकर ८ लाख टन तक की चीनी उत्पादन की क्षमता में बढ़ोत्तरी हो सके। नये चीनी कारखानों के लगाने के लिये सैकड़ों करोड़ों रुपये की विदेशी मुद्रा का भी उपयोग किया गया। इस संदर्भ में देश की चीनी उत्पादन की दिशा को ध्यानपूर्वक अध्ययन करना लाभप्रद होगा। चीनी का उत्पादन वर्ष १९६५ से ६८ तक निम्नलिखित रहा—

वर्ष	चीनी का कुल उत्पादन (लाख टनों में)
१९६५-६६	३५.५
१९६६-६७	२१.००
१९६७-६८	१५.०० (अनुमानित)

अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि १९६६-६७ में किस उद्देश्य के लिए मशीनरी बढ़ायी गयी थी ? उद्योग में पहले से ही बहुत सी क्षमता अनुपयोगी अवस्था में विद्यमान थी। पूंजीगत सम्पति को बढ़ाना पूर्णतः अनावश्यक था और इस पूंजीगत सम्पत्ति के कारण अतिरिक्त खर्चे में भी भारी बढ़ोत्तरी करनी पड़ी। इसी कारण से उद्योग की ओर से भी अनुत्पादक कार्य का शोर मचाया गया और चीनी के ऊंचे दामों के लिये दबाव डाला गया।

इसके विपरीत यदि मशीनों पर पूंजीगत खर्चे के बढ़ाने के स्थान पर सरकार ने गन्ने की खेती बढ़ाने के लिये अधिक तीव्रता का मार्ग अपनाया होता तो हमें कई आर्थिक पक्षों में लाभ होता। इस पद्धति से प्रति एकड़ भूमि में इस गुना अधिक चीनी का उत्पादन हुआ होता और परिणाम स्वरूप वर्तमान भूमि की उत्पादकता में १० गुना अधिक की बढ़ोत्तरी हुयी होती। इसके द्वारा गन्ना पिराई की अवधि में लगभग १०० प्रतिशत बढ़ोत्तरी हुयी होती और परिणाम स्वरूप वर्तमान क्षमता की अनुपयोगिता को लम्बा अवधि तक प्रयोग में लाया जा सकता था, साथ ही पिराई के योग्य गन्ने में अधिक चीनी की रिकवरी हुयी होती और कम भूमि में पर्याप्त मात्रा में पूरक उत्पाद भी मिलते। ध्यान रहे कि हमारी योजना के अनुसार पूंजीगत उपकरणों में भी कोई विशेष अन्तर लाने के लिए नहीं था और साथ ही अधिक उत्पादन के कारण घरेलू बाजार और निर्यात के लिए चीनी की कीमत में भी कमी होती।

चीनी उद्योग के लिए प्रमुख और सबसे अधिक अनिवार्य आवश्यकता (input) सिंचाई और उर्वरक की है। सिंचाई, ट्यूबेल, नलकूप द्वारा और उर्वरक हरी खाद द्वारा मिलती है। एक गाँव के लिए एक नलकूप पर्याप्त है। भारत में वर्तमान कारखानों को गन्ना देने के लिए १० हजार नलकूप पर्याप्त है। इनकी लागत केवल १०० करोड़ रुपए होगी, परन्तु यह ८ लाख टन अतिरिक्त उत्पन्न चीनी के मुकाबले में ४० लाख टन अतिरिक्त चीनी देगी। ध्यान रहे कि खाद्य मंत्री ने २०० रुपए की लागत पर ८ लाख टन चीनी के अतिरिक्त उत्पादन का

सुझाव दिया था। चीनी की उत्पादकता को बढ़ाने से हमारी शोध इकाई (अग्रगामी इकाई) की योजना के अन्तर्गत उपभोक्ता के लिए प्रति इकाई कीमत भी कम होती।

भूमि की उत्पादकता बढ़ाने से खाद्य सामग्री उत्पन्न करने वाली फसलों के लिये अतिरिक्त भूमि भी प्राप्त होती। आजकल उत्तर, प्रदेश, बिहार, पंजाब, मध्यप्रदेश, राजस्थान और पश्चिमी बंगाल में हमें प्रति एकड़ ०·३ टन चीनी प्राप्त होती है। महाराष्ट्र और दक्षिण भारत के कुछ भागों में हमें प्रति एकड़ ३·० टन चीनी उपलब्ध होती है। इसका अर्थ हुआ उत्तर भारत के मुकाबले में १० गुने अधिक की प्राप्ति। यह अन्तर स्पष्टतया inputs के कारण है और उत्तर भारत में अनुपयोगी मशीनरी के लगाने के स्थान पर नलकूप सिंचाई और उर्वरक योजनाओं पर पूंजी लगाने से इस अन्तर को दूर किया जा सकता है।

वर्ष १९६५-६६ से १९६७-६८ तक चीनी के उत्पादन में कमी स्पष्टतया कच्चे माल की कमी के कारण थी। अनावश्यक पूंजीगत उपकरणों पर भारी खर्चे ने न काम में आने वाली क्षमता को बढ़ा दिया और चीनी की कीमतों पर नियंत्रण के साथ कारखानों ने गन्ने की कीमतों को बरदाश्त करना कठिन महसूस किया। इसका प्रभाव यह हुआ कि जो भी गन्ने का उत्पादन हुआ, उसे सफेद चीनी बनाने के स्थान पर गुड़ और खाड़सारी चीनी की ओर भेज दिया गया। इसने उद्योग की समस्या को और भी जटिल बना दिया। कीमतों, लाइ-सेन्स और पूंजी की नीति का गलत रूप से बनाना ही सम्पूर्ण घोटाले के लिये दोषी है। प्रथम योजना के काल में १४३ चीनी कारखानों की क्षमता ३२ लाख टन थी, जो सात मास कार्यकाल और ११ प्रतिशत चीनी रिकवरी के आधार पर थी। वर्ष १९६१-६२ में अधिक चीनी की उपज को रोकने के लिये १० प्रतिशत कटौती करने के लिए सरकार वाध्य हुई थी। इसने कारखानों की न प्रयोग में आने वाली क्षमता को बढ़ाने के लिए वाध्य किया। चीनी कारखानों की सिद्ध की गई क्षमता के वावजूद सरकार २०० करोड़ रुपया लगाने के लिए प्रस्तुत हुई और इस तथ्य को भुला दिया कि पुरानी मशीनरी (जिसकी खरीदने की कीमत की धनराशि वर्तमान कीमत की केवल १० प्रतिशत है) पूर्णतः ठीक थी और एक लम्बे काल तक वह चल सकती था और जो भीतरी और विदेशी बाजारों की मांग को पूरा भी कर सकती थी। सरकार के इन सभी निर्णयों के कारण गन्ने की फसल के लिए कुल क्षेत्रफल बढ़ गया है (सिंचाई के दुर्लक्ष्य के

परिणाम स्वरूप भूमि उत्पादकता गिर गई है), गन्ना पेरने की क्षमता बढ़ गई है, लगाई गई मशीन की क्षमता बढ़ गई है और चीनी का उत्पादन पहले से निर्धारित कटौती वाले मात्रा से गिरकर आधी रह गयी है। अब चीनी कारखाने स्थापित करने व लाइसेन्स लेने से लोग इनकार कर रहे हैं, यह है पूंजी की गम्भीर स्थिति, जो अपने में स्वयं की हार मानती है और फिर भी सरकार ने श्रमिकों के विवेकपूर्ण सुझाव को नहीं सुना। क्यों? क्या पूंजी उत्पादकता पर श्रमिकों द्वारा सुझाव देना वर्जित है?

उत्तर भारत में गन्ना पिराई के लिये उपयुक्त मौसम १ नवम्बर से ३१ मई तक रहता है। नवम्बर मास में चीनी की रिकवरी कम होती है, अर्थात् अधिकतम ८ प्रतिशत तक रहती है और प्रतिमास बढ़ते-बढ़ते मार्च में १२ प्रतिशत तक बढ़ जाती है। अब कारखानों को गन्ने की सप्लाई मार्च, अप्रैल व मई मास तक दी जा सकती है, यदि गन्ने के खेतों के लिये उचित सिंचाई उपलब्ध हो। चीनी की रिकवरी का एक आधार गन्ने की परिपक्वता पर है, जो सीधे सिंचाई से नियंत्रित होती है, सिंचाई की सहायता से अप्रैल, मई में १३ प्रतिशत तक रिकवरी हो सकती है, परन्तु सिंचाई के न होने पर १० प्रतिशत और कभी कभी ६ प्रतिशत रह जाती है। अब गन्ने की कम सप्लाई उद्योग को प्रभावित करती है और इसका अत्यधिक प्रभाव पड़ता है, जब चीनी की रिकवरी के सबसे उपयुक्त अप्रैल व मई के मौसम में मशीनरी का प्रयोग नहीं किया जाता। वस्तुतः ऐसा ही उत्तर भारत में होता है। इसलिये भूमि-उत्पाद की अनुपात सिंचाई और उर्वरक के दुर्लक्ष्य के कारण अन्तिम उत्पाद के रूप में पर्याप्त मात्रा में कम हो गई है। परिणामस्वरूप पूंजी-उत्पाद अनुपात की सभी मिलों में कमी हुई है और उस समय अर्थात् जोरों के मौसम में श्रमिकों को निरुपयोगी बनाने के लिये बाध्य किया है। इस दुर्लक्ष्यता ने गन्ने की बुवाई हेतु बीच के और देर से पकने वाले किस्म के उचित अनुपात को अव्यवस्थित कर दिया है और इससे पिराई का सर्वोच्च लाभदायक कार्यक्रम भी अव्यवस्थित हो गया है।

अब सरकार को यह स्पष्ट हो गया है (कम से कम हम यह आशा करते हैं) कि उसकी शक्कर नीति पूर्णरूपेण असफल हो गई है। केन्द्रीय सचिवालय में बाबू और राजनीतिक लोग अपनी असफलता को छिपाने के लिये बाजार के नियंत्रण में ढील दे रहे हैं। अब सरकार ने कारखानों को अपनी उत्पाद का ४० प्रतिशत खुले बाजार में बेचने की छूट दे दी है। बाजार में अब दो कीमतें

हैं, नियंत्रित कीमत १५० रुपये प्रति क्विंटल है और खुले बाजार में कीमत ५०० रुपये प्रति क्विंटल है। यह किस कारण से ! क्या यह राष्ट्र के अमूल्य बचत और विदेशी मुद्रा का दुरुपयोग नहीं है ? और इसके पश्चात भी सरकार श्रम उत्पादकता की बात करती है। यदि सरकार ने श्रमिकों की सिफारिश की ओर ध्यान दिया होता, तो उसे कम मूल्य पर अधिक चीनी प्राप्त हुई होती। विदेशी मुद्रा बरबाद करने के स्थान पर हमने शक्कर की विश्व बाजार पर कब्जा करके विदेशी मुद्रा अर्जित की होती। उद्योग में दो लाख श्रमिको की आय तीन गुनी हो जाती। अब सुगर उद्योग में अकुशल श्रमिकों का न्यूनतम वेतन १०६ रुपये प्रतिमास है (६० रु० वेतन और ४० रुपये मंहगाई तथा शेष अन्य)। उत्तर भारत में इनके काम का समय २ मास से ४ मास तक का है। हमारे सुझाव को अपनाने के पश्चात श्रमिक को ७ मास का काम मिला होता और वह भी २०० रुपये प्रति मास पर। ये सभी आकड़ें पहले सिद्ध किये जा चुके हैं और अब पुनः भी सिद्ध किये जा सकते हैं। परन्तु सरकार साइसेन्स देकर एक प्रकार का व्यापार बनाना चाहती है। वह उत्पादकता और जीवन स्तर को बढ़ाने के बारे में चिन्तित नहीं है और उचित श्रम शोध संस्थानों को उपभोक्ता और श्रमिकों की सेवा करने से भी रोक रही है। कम से कम इस मामले में उसके कारनामों का यही परिणाम हैं। हमारे सुझाव को मानने पर सरकार अपनी आय जो इक्साइज ड्यूटी. परचेज टैक्स, आयकर और सुपर टैक्स के रूप में कमाती है, तिगुनी हो जाती। कारखानों, आयात और बाजार में चीनी बेचने के लिये लाइसेन्स देने के रूप में काले धन को कोई भी न कमा सकता। उत्पादकता को बढ़ाकर, हरएक कारखाने की आय और किसानों की आय को बढ़ाकर, बचत की क्षमता को पर्याप्त रूप से पैदा किया गया होता। परन्तु ऐसे राष्ट्रीय हितों की कौन चिन्ता करे ?

उद्योग का अप्रधान उत्पाद (By product) भी निरुपयोगी वा फालतू मशीन के स्थान पर सिचाई व उर्वरक जैसे इनपुट्स से सम्बन्धित है। यह इसलिए है क्योंकि वह गन्ने की परिपक्वता और कार्यकलापों की अवधि पर निर्भर करता है। शीरा, जो पावर अलकोहल के लिए कच्चा माल है और जो पेट्रोल से मिलाकर मोटरकार और ट्रक्स के चलाने के उपयोग में आता है और जिसे रबर के सामानों के बनाने में भी उपयोग किया जाता है, शक्कर उद्योग का बहुमूल्य अप्रधान उत्पाद है। श्रमिकों के सुझावों को मानने से शीरे की सप्लाई में भी बढ़ोत्तरी

हुई होती। खोई जो कागज बनाने के लिये बहुमूल्य कच्चा माल है, हमारे सुझाव को मानने पर प्राप्त हुआ होता। खोई सर्वसाधारण रूप से चीनी उद्योग में ईंधन के रूप में प्रयोग की जाती है। परन्तु जब कारखाना लम्बे काल तक के लिए चलता है, तब गर्मियों के मौसम में (पुनः ध्यान दें कि ऐसा अधिक रिकवरी के योग्य मौसम के मध्य में होता है) उबालने वाली प्रक्रियाओं में भाप की खपत कम हो जाती है। गन्ने की परिपक्वता पर अधिक रिकवरी होने पर गन्ने के रेशे का अनुपात भी बढ़ जाता है। इन दोनों ही कारणों से पर्याप्त रूप से खोई मिल सकती है, परन्तु सरकार की संकीर्ण दृष्टिकोण के कारण ऐसा सम्भव न हो सका।

ऊपर लिखे अप्रधान उत्पाद के बावजूद चीनी उद्योग के अन्य भी अप्रधान उत्पाद हैं अर्थात् चीनी कारखानों के चारों ओर वस्तुओं के अन्य उपयोग भी हैं। परन्तु हमारे द्वारा उत्पादकता के सम्बन्ध में दिये गये योजनाओं पर पूंजीपतियों और सरकार के अन्धेपन के कारण दुर्लक्ष्य हो रहा है। उदाहरणार्थ- गन्ने के रस की सफाई करने पर जो गन्दगी निकलती है, एक अच्छी खाद (Organic mamuse) है। उन कारखानों जिनमें सल्फीटेशन प्रक्रिया की जाती है, से बनी खाद को गन्ने व अन्य फसलों के लिए प्रयोग किया जा सकता है। कारबनाइ-जेशन प्रक्रिया वाले कारखानों से हमें गाढ़ी Pressmud मिलती है। इसका खाद के रूप में और मोम के बनाने के लिए कच्चे माल के रूप में उपयोग के लिए शोध किया गया है, परन्तु सरकार ने अभी तक इन परिणामों को व्यवहार में लाकर व्यपार के लिए उपयोग नहीं किया गया है। इसी प्रकार सरकार ने यह मालूम करने के लाखों रुपये का व्यय किया है, जिसके अन्तर्गत कारखाने से निकले गन्दे पानी के स्वच्छ करने का प्रयत्न किया गया है, ध्यान रहे कि यह पानी ग्रामों में पशुओं व मनुष्यों के स्वास्थ्य के लिए घातक है, परन्तु इस तथ्य को सुगमता से भुला दिया है कि इस पानी को सिचाई के लिए और गन्ने अथवा अन्य फसलों के पकाने में अच्छे माध्यम के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। यह तो स्वच्छ पानी में मिला जुला फ्रेस मद है, यदि इस पानी को उसी रूप में प्रयोग किया जाय तो इससे सिचाई और उर्वरक पर पूंजी के खर्चे में बचत की जा सकती है और हमारी शोध इकाई द्वारा सुझाई गई राय पर होने वाले १०० करोड़ रुपये के खर्चे की धनराशि में भी कमी सम्भव है।

हमारी शोध इकाई की योजना के अनुसार हम २० लाख एकड़ गन्ने की

के उपयोग में आने वाली भूमि से कन्ट्रोल कीमत से सस्ते मूल्य पर ६५ लाख टन चीनी का उत्पादन कर सकते हैं, जबकि ५० लाख एकड़ की विस्तृत भूमि से हम इस समय केवल १६ लाख टन चीनी का उत्पादन कर पाते हैं। गन्ने के अंकुर पैदा होने से लेकर कटाई तक कुल १६ बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। परन्तु उत्तर भारत में गन्ने की केवल २ या ३ बार सिंचाई हो पाती है, कुछ क्षेत्रों में सिंचाई के कोई साधन नहीं हैं और फसल पूर्णतया वर्षा पर ही निर्भर है। महाराष्ट्र में जहां सिंचाई के साधन अच्छे हैं, गन्ने की औसत उपज ६० से ७०टनप्रति एकड़ है। उत्तर प्रदेश और बिहार में जब कभी गन्ने की बढ़ती अवधि में १० बार सिंचाई मिल जाती है, तो गन्ने की उपज प्रगतिशील किसानों के खेतों में ८० टन प्रति एकड़ की दर तक प्राप्त की गई है, इस परिणाम को सरकार द्वारा आयोजित प्रान्तीय गन्ना प्रतियोगिता योजना मे भी प्रदर्शित की गई हैं।

श्रमिक अपनी इस प्रकार की उलब्धियों के लिये किस स्थान पर प्रभावी प्रतिनिधित्व करें ? वर्ष १९६७ में वेतन मंडल के सम्मुख हमने ३ बार प्रतिनिधित्व किया, परन्तु यह असहाय वेतन मंडल उक्त विषयों मे कर ही क्या सकता हैं ? लोकसभा में इस विषय को यदि मूल कार्यक्रम के कुछ अराजनैतिक घंटों में लिया भी जाय, तो भी इसे दल के दृष्टिकोण से ही देखा जाता हैं। परिणाम स्वरूप इस समय गम्भीर रूप से चीनी की कमी हो गई हैं। वर्ष १९६०-६१ में हमारे पास १२ लाख टन चीनी अतिरिक्त रूप में थी। वर्ष १९६३ में हमारी शोध इकाई ने सरकार को अपना प्रतिवेदन दिया कि सरकार लाईसेन्स देने और पूंजी प्रधान उपकरणों के लिये ऋण देने की उत्पादन विरोधी नीति को रोके। यदि ऐसा किया गया होता तो भीतरी माँगों को पूरा करने के बाद तुलनात्मक कीमतों के द्वारा विश्वव्यापी चीनी बाजार को अपने आधीन करके विदेशी मुद्रा कमाई जा सकती थी। परन्तु सरकार की गलत ढग से धन के व्यय के कारण भारतीय उपभोक्ता अपने लिये ५०० रुपये प्रति क्विन्टल की अत्यधिक ऊंची कीमत देने के पश्चात भी चीनी की पर्याप्त मात्रा को प्राप्त नहीं कर पा रहा है। ध्यान रहे कि वर्ष १९६१ से १९६३ तक चीनी की कीमत ११० रुपये प्रति क्विन्टल थी। दूसरी ओर चीनी मशीनरी बनाने वाले कारखानों के पास मशीन बनाने के लिए आदेश नहीं हैं। सरकार का सुझाव देशभक्ति के रूप में था जिसमें कि विदेशी मशीनों के स्थान पर देश में ही चीनी मिलों

ने मशीनों को बनाना शुरू किया, परन्तु इसी बीच सरकार ने जल्दबाजी करके करोड़ों रुपये व्यय करके अत्यधिक मशीनरी का आयात किया और इधर देश के अन्दर मशीन बनाने की क्षमता के उत्पन्न हो जाने पर अब आदेश की कमी के कारण वे कारखाने निरुपयोगी पड़े हैं। एक ओर इन सभी बचतों और विदेशी मुद्रा की अपराध तुल्य हानि और दूसरी ओर देश के पवित्र नाम पर हमें वेतन नियंत्रण अपनाने के लिए आह्वान किया जाता हैं आखिर यह क्या है ? ऐसे नेताओं को श्रम उत्पादकता पर भाषण देने का क्या अधिकार है ?

निष्कर्ष

हमने पूंजी और भूमि उत्पादकता पर पर्याप्त लम्बी व्याख्या प्रस्तुत की है, क्योंकि हम यह अनुभव करते हैं कि यह पहलू राष्ट्रीय आय को बढ़ाने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है, फिर भी इसको दुर्लक्ष्य किया जाता है और इसमें असावधानी बरती जाती है। हमारी व्यवहारिक शोध ने तकनीकी सेवाओं के पहलुओं को अभी तक नहीं बदला है। ऊपर उल्लेख किए गये शोध पत्र में प्रो० महालनवीस ने ठीक ही कहा हैं कि औद्योगीकरण के संकटकाल में अप्लाइड शोध उद्देश्यपूर्ण, योजनाबद्ध कार्यक्रम के अन्तर्गत और परियोजना के आधार पर बनानी चाहिये और यह एक निश्चित अवधि के भीतर सक्रिय प्रयत्नों के लिए होनी चाहिए तथा साथ ही खाद्य, प्रतिरक्षा, निर्यात प्रोत्साहन, आयात पूरकता और सर्वसाधारण आर्थिक विकास की राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुकूल होनी चाहिए। परन्तु शक्कर उद्योग में इस प्रकार के खोज का यह एक ऐसा उदाहरण हैं, जिसके अन्तर्गत शोध को एक श्रम सगठन ने अपने खर्चे पर किया, साथ ही व्यापक रूप से हो रहे पूंजी और विदेशी मुद्रा जैसी अनुपलब्ध साधनों का गलत तरीके से व्यय रोकने के लिये किया और अत्यधिक उपयुक्त समय पर किया। शोध के सुझाव पर विशेषज्ञों द्वारा कई बार तर्क-वितर्क और विचार विमर्श किया गया, पश्चात सर्वसम्मति से अनुमोदन किया गया, परन्तु फिर भी लाइसेंस प्रदान करने के अपने जोश में सरकार ने इन सुझावों को दुर्लक्ष्य किया और करोड़ों रुपयों के मूल्य की विदेशी मुद्रा की हानि की।

और यह उदाहरण अपवाद के रूप में नहीं है। अभी-अभी पूना की एन्टीबायोटिक्स यूनियन और मद्रास की फूड कारपोरेशन कर्मचारी यूनियन ने सार्व-

जनिक क्षेत्र के कारखाने में हो रही हानि को रोकने के लिए एक अभियान लिया और उत्पादकता के लिए ठोस विचार प्रस्तुत किये। बम्बई की बेस्ट कारखाने में भारतीय मजदूर संघ की यूनियन ने शहरी बस सेवा की स्थिति को सुधारने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन को विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट के सुझावों को अपनाने के लिए अभियान लिया, परन्तु हर स्थान पर यह पाया गया कि अफसरशाही, जो गलत मान्यताओं से सम्बन्धित है और राजनीतिज्ञों के स्वार्थों, जो मत प्राप्त करने की अल्पकालीन साहसिक कदम के अलावा कुछ भी नहीं समझता, उत्पादकता के विचारों पर उसी समय विरोधी हो जाता है, जैसे ही श्रमिकों के द्वारा वे उठाये जाते हैं अथवा अधिक से अधिक राजनीतिक उत्तर प्राप्त होता है कि 'विषय विचाराधीन है।' फिर भी कुछ अपवाद भी हैं। जी० के० डल्लू कारखाना बन्डुप में और शुक्ला मन्सेस्ता उद्योग थाना (दोनों कारखाने बम्बई क्षेत्र में हैं) में भारतीय मजदूर सघ की यूनियनों के अनुभव इस सदर्भ में उत्साहप्रद हैं। श्रम प्रबन्ध सहयोग के कारण इन विषयों में यह पाया गया है कि कुछ प्रक्रियाओं में हमारे श्रमिकों ने गुणवत्ता नियंत्रण, हो रही हानि में कमी, मशीन-आयु में बढ़ोत्तरी, मशीनों की खराबी के कारण काम बन्दी में कमी, श्रम उत्पादकता और औजारों के प्रयोग व डिजाइन की विशेषज्ञताओं में विश्व रिकार्ड तोड़े हैं। परन्तु ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं और दोनों ही पक्षों द्वारा बड़ी कठिनाई से बनाये रखे जाते हैं। तब इसका अनुमाग लगानां कि उत्पादकता के नाजुक तरीकों के क्या भाग्य हो सकते हैं जब प्रबन्ध अत्यधिक हानि को स्वीकार करता है और इस प्रकार की हानि को छिपाने के लिए श्रमिकों को पेट काटने के लिए कहते हैं (और यह प्रक्रिया सार्वजनिक क्षेत्र में उपस्थित है)। इसमें क्या खराबी है जब कोई इस परिस्थिति के विरोध में विद्रोह करता है? परन्तु बड़े दुर्भाग्य की बात कि जब कोई ऐसा करता है और न्यायालय की गोद में ढकेल दिया जाता है तो वह पाता है कि न्यायालय में उत्पादकता का कोई भी तकनीकी विभाग नहीं है। इस विषय पर उसके सभी तर्क व्यर्थ जाते हैं। वे किसी प्रकार के प्रोत्साहन पद्धति के डिजाइन को भी नहीं मानते। कई बार वे उन्हें विषय, कार्य और क्षेत्र से भी बाहर मानते हैं। एक राष्ट्रवादी और रचनात्मक ट्रेड यूनियन के लिये जो देश में पहले से ही कमजोर है, उसके सामने उद्योग का कुछ भी भला करने का मार्ग नहीं है। ये वे आधारभूत विषय हैं, जिन्हें उत्पादकता आन्दोलन को अपने सम्मुख रखना चाहिये, बजाय इसके कि वर्तमान काल के चल रहे प्रवचनों तथा अन्य प्रचा-

रात्मक भाषणों को चालू रखा जाय। इन सभी विषयों के उत्तर हमें ढूढ़ने होंगे, जब हम एक रचनात्मक यूनियन और प्रबन्ध के बीच में संचार व्यवस्था के माध्यम की योजना बनावें और उत्पादकता को सुधारने के लिए सुझाव प्रस्तुत करें।

कार्यवाही सम्बन्धी विषय : प्रोत्साहन योजना

उत्पादकता के परिणाम के लिए सर्वोच्च व स्पष्ट टेकनिक अदायगी की पद्धति है। पहले पहल विचार करने पर यह 'पद्धति' बड़ी मनमोहक प्रतीत होती है, परन्तु समूचा परिणाम प्राप्त करने के लिए पर्याप्त मात्रा में तैयारी हेतु काम करना पड़ता है। बहुत से ऐसे उदाहरण हैं, जिनमें इस प्रकार के प्रारम्भिक भूमिका वाले काम को दुर्लक्ष्य कर देने से बाहरी रूप से प्रशंसनीय पद्धतियों को भी अफलता का मुंह देखना पड़ता है। इसके पहले कि परिणाम देने वाली अदायगी पद्धति को अपनाया जाय, जिसे वर्कस्टडी अपनाने के पश्चात लागू करना सम्भव है, दो प्राथमिक बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है। प्रथम यह कि श्रमिकों की सहायता प्राप्त हो, उन श्रमिको की, जो ऐसी योजना के अन्तर्गत होंगे और द्वितीय पद्धति के अध्ययन से सम्बन्धित है सर्वप्रथम श्रमिकों के सक्रिय सहयोग से श्रमिकों को उत्पादकता लाभ के परिणामों को बताकर एव मनवाकर पूरें कारखाने में एक क्रमबद्ध उत्पादकता विश्लेषण करना चाहिये। कई बार इस प्रकार के अध्ययन से यह पता लगेगा कि खराब योजनाओं के के कारण अनुपयुक्त रख रखाव, औजार, सामग्री, आर्डर्स अथवा विशेषज्ञों की कमी आदि के कारण कुछ समय के लिए मशीने निरुपयोगी बनी रहेंगी। जब ऊपर की कमियां खराब निरीक्षण और अनुपयुक्त प्रेरणाओं से जुड़ जाती हैं तो परियोजनाओं में न प्रयोग में आने वाली श्रमशक्ति बढ़ जाती है, क्योंकि सम्पूर्ण वातावरण आलस्यपन को प्रोत्साहन देता है, साथ ही सामग्री को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में द्विविधा और जमघट की स्थिति पैदा हो जाती है। दोषपूर्ण डिजाइन और ले आउट, स्तर से नीचे की पद्धतियाँ, खराब गुणवत्ता नियंत्रण, अपूर्ण विवरण अथवा खराब उपकरण और खराब औजार के कारण काम की गति में और काम करने में रुकावटें पैदा होती हैं, साथ ही अनुपयुक्त उत्पादन नियंत्रण, भिन्न-भिन्न कार्य सम्बन्धी समय के आकड़ों की कमी, गलत अनुमान लगाने वाली पद्धति, दोषपूर्ण ऐनवैन्टरी कन्ट्रोल तथा अनुपयुक्त संचार

पद्धति उत्पादकता में अवरोध पैदा करती हैं। यदि इसके साथ पुरानी और अप्रचलित मशीनें अथवा मशीन टूल्स और घिसी हुई मशीनों के कारण अवरोध की गति, खराब पद्धति और रख रखाव के दुर्लक्ष्य को जोड़ दिया जाय, तो श्रम उत्पादन की बड़ी दयनीय स्थिति हो जायगी और उसके बारे में सोचना भी व्यर्थ होगा। उक्त सभी बातों को केवल मात्र वर्कस्टडी टेकनालाजिस्ट द्वारा ही नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि कई बार इस प्रकार के अध्ययन श्रमिकों की कुशलता, दिनचर्या, हस्तकला की परम्परा और परस्पर व्यक्तिगत सम्बन्धों पर बुरे परिणाम डालते हैं। यदि इन सभी बातों के लिए एक श्रमिक को निर्जीव प्राणी की तरह मैथेड्स इन्जीनियर के हाथों में सौंप दिया जाता है और उसकी आज्ञाओं के अनुसार काम करने के लिए कहा जाता है, तो ऐसी प्रक्रियाओं से श्रमिकों की भावनाओं को चोट पहुंचती है और इनके फलमें उनके प्रति द्वेष और क्रोध बढ़ता है तथा इस प्रकार पूरी योजना असफलता की ओर अग्रसर हो जाती है। ऊपर लिखे ढंग के अनुसार प्राथमिक मैथेड स्टडी के बाद ही कार्य के मापांकन को अपनाना चाहिए। आम तौर पर इन दोनों अध्ययनों के बीच में स्पष्ट तौर पर विभाजन करने वाली कोई रेखा खींचना सरल नहीं है, क्योंकि व्यवहार में टाइम स्टडी करते समय मथेड्स से ही प्रगति की खोज की जाती है। फिर भी कार्य के मापांकन के पूर्व पूर्णरूप से नमूने के अध्ययन अथवा पद्धति में सुधार करना चाहिये, क्योंकि इसके ही आधार पर परिणामों के प्राप्त करने हेतु अदायगी वाली पद्धति का पूरा महल खड़ा है। भारत के प्रशासकीय वर्ग के लिये हैदराबाद में जो विद्यालय है, वह समस्याओं को पहचानने के लिये निःशुल्क सलाहकार सेवा प्रदान करता है। हम यह भी जोड़ना चाहेंगे कि आरगोनामिक्स (Orgonomics) का उपयोग भी उस हद तक इस क्रम में सम्मिलित करना चाहिये, जितना कि वर्कस्टडी का भाग है। इसमें भिन्न-भिन्न पक्षों, जैसे श्रमिकों की काम करने की आदत, प्रक्रिया का स्वभाविक रूप से प्रचलन, शारीरिक स्थिति, काम का बोझ, काम में सुर, नियमितता, गति, थकान, सक्रियता और भिन्न-भिन्न प्रकार के काम के बोझ को लेना और साथ ही कार्य स्थल का ले आउट, कार्य की स्थिति और कल्याण को ध्यान में रखना चाहिये, साथ ही मनुष्य सम्बन्धी विशेषताओं, जैसे- सीखने की प्रक्रिया, कुशलता, स्वास्थ्य, लिंग, आयु, बुद्धिमत्ता और मनुष्य की आकृति सम्बन्धी आकड़ों को भी ध्यान में रखना चाहिये। कार्य के बोझ ३ प्रकार के होते हैं, शारीरिक, देखने, सुनने व बोलने सम्बन्धी और मानसिक (प्रस्तुत करना और नियंत्रित करना)। गति-

विधियों के प्रकार निम्नांकित हैं-- शरीर के सभी जोड़ जैसे कि पोर, कलाई, कूल्हा, कन्धा, व रीढ़। ये क्रमशः अधिक बोझ बरदास्त करते हैं। ले आउट की डिजाइन शीघ्रता की अथवा साधारण कार्यक्षेत्र के अनुकूल होनी चाहिये। साथ ही कम से कम समितीय, स्वरानुकूल, आदत के अनुकूल, स्वभाविक और नियमित गतिविधि सम्बन्धी प्रक्रिया के मूल्यांकन से सम्बन्धित सिद्धान्तों को उचित स्थान देना चाहिये। वातावरण को नियंत्रित करने की आवश्यकता है ताकि प्रकाश (आँखों को चौधयाने वाले प्रकाश, प्रकाश के स्तर--वस्तुओं और उनके वातावरण से सम्बन्धित स्तर को निचिश्त करने वाला तथा प्रकाश के सम्बन्धी हैं), वायु के आवागमन की उचित व्यबस्था, तापक्रम एवं नमी, शोर, जलवायु, (वायु की गति, वर्षा, धूल ओर समुद्र तट से ऊँचाई) रंग, धुआ और गन्ध कार्यस्थल से शौचालय, कैन्टीन और सिगरेट पीने के स्थान की दूरी, यातायात और क्षेत्र में होने वाली रुकावटें तथा सकरेपन, नयनाभिराम, भूमि-बगीचे और सुहावने दृश्य के वातावरण, सफाई और धूप की रोशनी व गर्मी आदि के वायुमंडल में फैलने की प्रक्रिया से सम्बन्धित विषयों को अनुकूल बनाया जा सके।

एक सरल उत्साह पद्धति, जिसके अनुसार हर एक श्रमिक अपने उत्पादन का आकलन कर अपने प्रोत्साहन वेतन का हिसाब लगा सके-- स्पष्टतः ही श्रमिकों के दृष्टिकोण के अनुसार एक अच्छी पद्धति है। परन्तु आधुनिक कारखानों में प्रक्रियायें इतनी पेचीदी हैं कि वे कई पहलुओं पर निर्भर रहती हैं, जैसे कच्चे माल के गुण, मशीन की आयु, तापक्रम, टीमवर्क आदि। जिसके कारण एक सरल प्रोत्साहन वेतन पद्धति का बनाना व्यवहारिक नहीं हो पाया है इसके साथ ही इन्जीनियरिंग कारखानों की बहुत सी प्रक्रियाओं में बड़े गुणवत्ता के नियक्षण की आवश्यकता रहती है। फिर भी भारतीय मजदूर संघ की यूनियन का यह अनुभव है कि जे० के० डब्लू कारखाना बन्दुप (बम्बई) में कितनी भी पेचेदी प्रोत्साहन योजना क्यों न हो-- वर्क चार्ट्स और कार्य परीक्षण पद्धतियों की प्रथमिक प्रशिक्षण द्वारा श्रमिकों की समझ में आ सकती है। इस योजना को इकाई स्तर पर लागू करना चाहिए। यह अनिवार्य रूप से आवश्यक है कि प्रोत्साहन योजना के सभी ब्योरों को सामूहिक सौदेबाजी के द्वारा निर्णय करना चाहिये और उसमें रजिस्टर किये गये समझौतों को कानूनी रूप से सम्मिलित करना चाहिये तथा उसके पश्चात ही कारखाने में उन्हें लागू करना चाहिये।

नहीं तो श्रमिकों के मनोबल सम्बन्धी संदेह बने रहेंगे और अच्छी से अच्छी बनाई गई योजना भी अन्ततोगत्वा असफल हो होगी। कोई भी प्रोत्साहन वेतन सम्बन्धी योजना को ऐसा नहीं बनाना चाहिये कि उससे वेतन में कटौती हो। यह समुचित प्रगति की सभी भावनाओं के विरुद्ध है। व्यक्तिगत और सामूहिक प्रोत्साहन योजनाओं में भेद करना कठिन है। प्रत्येक मामले में पर्याप्त रूप से वातावरण, उत्पादन प्रक्रियाओं की प्रकृति अथवा कार्य की प्रकृति मनुष्य सम्बन्धी ऐतिहासिक पक्ष आदि पर निर्भर करती है। फिर भी हम सामूहिक रूप से यह अनुभव करते हैं कि भारतीय पद्धतियों में सामूहिक प्रोत्साहन योजना अच्छी है। तथा यह और अच्छा एवं संतोषप्रद है कि सामूहिक प्रोत्साहन योजना प्रोत्साहन वेतन की दरों को निश्चित करे (विशेषकर गुण, नियंत्रण, मशीन का बिगड़ जाना, कच्चा माल, टूल्स और आर्डर्स से उत्पन्न होने वाले विषयों को अपने प्रभाव डालने वाली क्षमता को उचित स्थान देना चाहिये) और वेतन के लिये वास्तविक जनराशि समूह में व्यक्तिगत योगदान के मापांकन से निर्धारित होनी चाहिये। इस प्रकार की सामूहिक योजना अनुपस्थित रहने की स्थिति में भी यह नियंत्रित कर सकेगी। जब कार्य के उन आकड़ों पर, जिन पर प्रोत्साहन वेतन का हिसाब किया जाता है, उपस्थिति के स्तर से पर्याप्त प्रभावी होती है अथवा जब समूह की एक निश्चित संख्या की कमी किसी एक श्रमिक के छुट्टी लेने के कारण होती है तो उसे नाकारात्मक मूल्य दिया जाना चाहिये। हम यह नहीं विश्वास करते कि समय के लिये आधारित दर प्रोत्साहन योजना लागू करने में एक बार न पाने वाली रुकावट है। प्रोत्साहन वेतन को एक अतिरिक्त वेतन के रूप में माना जा सकता है और तब उत्पादकता की बढ़ोत्तरी पर आधारित आय में बढ़ोत्तरी सभी श्रमिकों को समान रूप से प्राप्त हो सकेगी। साथ ही उत्पादकता लाभ के वितरण में यह आवश्यक नहीं है कि वे एक गणित में उपयोग होने वाली समानता के रूप में हो, जो कि कुछ मामलों में उत्पादकता के उद्देश्य को ही पराजित कर दे। न्याय और अवसर की समानता के सामाजिक विचार-ऐसी मनोवृत्तियां हैं, जो व्यक्ति और समूह के व्यवहार और गतिविधियों को लम्बे काल तक प्रभाव डालती हैं। बहुत से पाश्चात्य देशों में जहां टाइम रेटेड श्रेणियां नहीं पायी जातीं, एक प्रकार की टाइमरेटेड योजना के लागू करने विचार सम्मुख आ रहे हैं। भारत में इन दिशाओं के विपरीत योजना के लागू करने से पर्याप्त हानि सम्भव है। साथ ही वर्कस्टडी की पद्धति पर्याप्त मात्रा में विकसित हो गयी है, जिसमें क्लर्क तक को सम्मिलित किया गया है, जहां पर

सम्बन्धित "गतिविधियों के नमूने (Activity sampling)" के उपयोग कुशलता के दर (Efficiency coefficients की जानकारी के लिये प्रयोग में आते हैं। इन्हें भिन्न-भिन्न रूपों में जाना जता है जैसे--- .. .. ..random observation studies,.. .. .. ..snap reading, ...ratio delay,.. .. .. .. work sampling.. .. .... activity ratio study .. .. machine utilisation study .. .. अथवा .. .. observation ratio। यह .. .. . theory of sampling और .. .. .. theory of probability पर आधारित है। यह न दुहराये जाने वाली प्रक्रियाओं के विश्लेषण में अधिक लाभकारी है। अनुपाततः यह सस्ता ढंग है। निरीक्षण हेंतु उद्देश्यों को स्थापित करता है। मनुष्य शक्ति की योजना में सहायक है और समय के साथ बदलती हुई प्रक्रियाओ में प्रभावी होने में भी सहायक है। इस पद्धति के अन्तर्गत किसी भी गतिविधि के नमूने के परिणामों में विश्वास की मात्रा सम्पन्न कराने हेतु प्रबन्धिका निर्णय लेती हैं और तब नमूने के तौर पर प्रक्रियाओं को वर्कस्टडी विभाजित करती है और और निम्नलिखित सूत्र के आधार पर निरीक्षण संख्या निर्धारित होती है---

$$N = \frac{6P(100-P)}{L^2}$$

जहां पर N = निर्धारण संख्या

6 = विश्वास स्तर

L = यथार्थता की सीमा और

P = कार्य समय का अनुपात प्रतिशत में, इसलिये

(100—P) = बैठकी का समय

समय पर आधारित वेतन दर क्लर्क के काम से घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है और चूंकि इस प्रकार की श्रेणियों को भी सीधी पद्धति द्वारा प्रोत्साहन योजनाओं के अन्तर्गत लाना हैं, हमें दोनों ही प्रकार की पद्धतियों--समय पर निर्धारित वेतन दर और प्रोत्साहन योजनाओं को अपनाना पड़ेगा। इस विचार के साथ ही एक और अतिरिक्त लाभ प्रोत्साहन सम्बन्धी वेतन को भिन्न रूप में देने के लिये भी है। कभी-कभी यदि किसी दूसरी तिथि पर दिया गया तो इसका एक प्रशंसनीय प्रभाव पड़ता है। एक विशेष कारखाने में जहाँ पर भारतीय मजदूर संघ की यूनियन सम्मिलित थी, इस विभाजन का हमें अनोखा अनुभव हुआ। एक अच्छे प्रकार से आयोजित प्रोत्साहन योजना के लागू होने के बाद हर मास की सातवीं तारीख को साधारण वेतन के साथ प्रबन्ध ने प्रोत्साहन

वेतन देना प्रारम्भ किया। उल्लिखित कारखाने की यह वेतन तिथि थी। तत्पश्चात् ऐसा अनुभव में आया कि श्रमिक मासिक वेतन के रूप में भिन्न-भिन्न धनराशि पाने के इतने अभ्यास हो गये कि प्रोत्साहन वेतन उन्हें किसी प्रकार से प्रभावित करने में असफल हो गयी। तत्पश्चात् प्रबन्ध ने यूनियन से वार्तालाप कर प्रोत्साहन वेतन को सम्पूर्ण आय से पृथक कर लिया और उसे हर मास की २८ तारीख को देना शुरू किया। यह देखने में आया कि कारखाने के श्रमिको के खर्च करने की आदतें इस प्रकार से थीं कि उनमें से बहुत से श्रमिक पाँच अथवा दस रुपये तक की धनराशि के ऋण लेने के अभ्यस्त हो गये। प्रोत्साहन वेतन के मास के अन्त में प्राप्त होने की पद्धति उनके लिये वरदान सिद्ध हुयी और धनराशि की उपयोगिता उसके मूल्य से अत्यधिक रूप में लाभकारी हुयी, बजाय इसके कि यह धनराशि जब उनके मासिक वेतन के साथ दी जा रही थी। परिणाम यह हुआ कि कारखाने में श्रमिकों का नैतिक स्तर बढ़ गया और श्रमिकों ने प्रोत्साहन वेतन को बढ़ाने में अत्यधिक रुचि लेना शुरू किया, जिसने उनके परिवार जनों और पड़ोसियों के बीच सामाजिक स्तर को बदल दिया। इस प्रकार प्रोत्साहन योजना अत्यधिक सफल हुयी। प्रोत्साहन वेतन को कब शुरू किया जाय के संदर्भ में हम इस सिद्धान्त से सहमत नहीं हैं कि अतिरिक्त आय तभी शुरू होनी चाहिए जब कुशलता का एक विशेष स्तर प्राप्त हो जाय। इसके विपरीत हमारा यह दृष्टिकोण है कि प्रोत्साहन योजना को वास्तविक सफलता प्रदान करने के लिए इसे उत्पादन उस स्तर से अदा करना शुरू करना चाहिए जो कि किसी भी समय जबकि इस योजना को लागू करने की इच्छा प्रकट की जाय अथवा वर्कस्टडी के प्रारम्भिक रूप में मैथेड स्टडी को शुरू किया जाय। प्रबन्ध जो कि 'परिणाम के पश्चात अदायगी' की पद्धति को लागू करना चाहता है, योजना में अपना पूरा सम्मान दाव पर लगा देना चाहिए, जिसके अन्तर्गत पूरी योजना को प्रभावी बनाने के लिए अदायगी को तुरन्त लागू कर देना चाहिए। प्रारम्भ में अथवा उस समय जब वर्कस्टडी विशेषज्ञ क्षेत्र में अपने प्रथम प्रकटीकरण में श्रम, प्रबन्ध के इरादों पर उसी समय से सन्देह करना प्रारम्भ कर देता है कि प्रबन्ध अदायगी के एक भिन्न पद्धति को लागू करेगा। ऐसी परिस्थिति में यदि यूनियन से यह मांग की जाय कि वह पद्धति के लागू करने के लिए राजी हो कि अतिरिक्त आय देना तभी सम्भव होगा, जब वर्तमान कुशलता को बढ़ाया अथवा वर्तमान स्तरों को पार किया जाय, तब सम्भावना यह है कि यूनियन इस योजना को श्रमिकों द्वारा स्वीकृत कराने में अयोग्य

अथवा असफल हो जाय। ऐसी परिस्थिति में यदि यूनियन कमजोर है अथवा उसी या निकट की औद्योगिकता में एक प्रतिद्वन्दी यूनियन बनी हुई है, तब यह सम्भव है कि वह परिस्थिति का लाभ उठावे और उक्त विषयों को कार्यान्वित होने में असम्भव बना दें। फिर भी जब प्रोत्साहन वेतन साधारण स्तर से नीचे पर ही मिलना प्राप्त हो जाता है और बढ़ोत्तरी के कारण प्रशंसनीय अन्तर दिखाई देता है तब प्रोत्साहन योजना श्रमिकों में उल्लेखनीय वर्ग में भी रुचि पैदा करता है और शीघ्र ही हर दृष्टिकोण से एक लाभान्वित सुझाव बन जाता है। जैसे लम्बी छलांग लगाने के लिए एक कदम पीछे हटा जाता है, उत्पादन बढ़ोत्तरी के लिये इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनानी चाहिये। परन्तु इसके बगैर अतिरिक्त उत्पादन भी सम्भव नहीं होता, पूर्णतः पूर्व स्थिति बनी रहती है अथवा घटोत्तरी होना भी सम्भव है और किसी भी प्रकार का विश्वास पैदा करना अत्यधिक कठिन हो जाता है। प्रोत्साहन योजना को सफल बनाने में श्रमिक के जीवन स्तर को सुधारने की इच्छा आधारभूत प्रेरणादायी है, परन्तु इस प्रेरणा को कार्यान्वित होने के पहले श्रमिक को इस बात से सहमति होनी चाहिये कि योजना दूसरे माध्यमों द्वारा उसके लाभ को समाप्त नहीं किया जायगा और इसे कुछ अन्य बुराइयां अथवा शोषण के भिन्न स्वरूप को लागू करने के लिए एक अस्थायी बचाव के रूप में नहीं अपनाया जायगा, विशेषकर बहुत से श्रमिकों के मन में यह संदेह है कि एक बार काम के बोझ को बढ़ाने पर नियोजक की यह मनोवृत्ति पायी गई है कि वह इस बढ़े हुये काम को बाद में साधारण काम मानने लगता है। इसे अच्छे सम्बन्धों द्वारा बुद्धिमत्ता पूर्ण संचार द्वारा व्यवस्था, यूनियन के साथ ठेके द्वारा और दीर्घकालीन नीतियों द्वारा दूर करने की आवश्यकता है, साथ ही सामग्री के एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने, उपकरणों की कुशलता, मशीनों का बन्द हो जाना भी श्रमिक द्वारा लगाये गये परिश्रम के मापांकन में रोड़ा नहीं बनना चाहिये। यह सर्वसाधारण रूप से कुछ काल के बाद एक स्थायी प्रोत्साहन वेतन की अदायगी को दृढ़ करेगी।

असाधारण तथ्यों के प्रभाव को हटाने के लिये एक अच्छी योजना है, जिसे "पारितोषिक वेतन योजना (Premium Pay Plan)" कहते हैं। यह योजना अच्छी प्रकार से विदेशों में परीक्षित हो चुकी है। इस योजना के अन्तर्गत कार्य के वर्गीकरण और प्रकृति तथा कार्य के निभाने के अनुसार श्रमिक को एक निश्चित आधार के वेतन पर रखा जाता है। कार्य के निभाने के स्तरों को

वर्गस्टडी विशेषज्ञों द्वारा एक सप्ताह की अवधि में कार्य के मूल्यांकन किये जाने वाले कार्य-भाग पर निर्धारित किये जाते हैं। श्रमिक को तभी प्रोत्साहित किया जाता है कि वह कार्य की कुशलता कार्य स्थल पर प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत प्राप्त करे। प्रशिक्षण के दौरान श्रमिक को उस आधार पर वेतन दिया जाता है, जिसके अन्तर्गत वेतन की बढ़ोत्तरी के क्रमबद्ध रूप उसकी प्रशिक्षण की प्रगति से सम्बन्धित हैं जो कि उसकी कार्य के निभाने के स्तर के प्रोत्साहन हेतु की जाती है और जिसे तकनीकी रूप से 70M' hour level कहा जाता है। जब श्रमिक दो सप्ताह की अवधि के लिए 70M' hour level प्राप्त कर लेता है और अपने सुपरवाइजर को यह समाधान करा देता है कि वह इसे बनाये रख सकता है तो श्रमिक को कार्य निभाने के स्तर के अनुसार उपयुक्त वेतन स्तर पर रखा जाता है। जब कार्य निभाने के अगले स्तर को प्राप्त किया जाता है और उसी समान दो सप्ताह के लिए बनाये रखता है तब श्रमिक को ऊँचे स्तर के लिये ठेका करने की स्वतन्त्रता है, जिसमें कि इस ऊँचे स्तर के अनुकूल ऊँचे वेतन दिये जाते। यह पद्धति वेतन के स्तर को एक प्रकार का स्थायित्व प्रदान करती है और बाहरी हस्तक्षेप जैसा कि मशीन का बिगड़ना अथवा छुट्टियों का समावेश करती है। सर्व साधारण मशीन का बिगड़ना अथवा छुट्टियाँ श्रमिक को पीसरेट हेतु दण्डित करतीं। इस प्रकार श्रमिक को अपने अभ्यास कार्य के सुर के अनुसार अपने आपको ढालने के लिये कुछ अधिक स्थान प्रदान करती हैं और वेतन में उन पहलुओं के प्रभाव को रोकती हैं जो कि श्रमिक के नियंत्रण के बाहर है। प्रोत्साहन वेतन की कोई भी पद्धति क्यों न हो, यह देखना अनिवार्य है कि श्रमिक पैसे के पीछे भागने के अन्तर्गत अपने आपको अधिक न खपा दे। कुछ पीस रेट वेतनों की पद्धति का यह अनुभव है, उदाहरणार्थ-- बाम्बे डाक्स। इन पद्धतियों ने उत्पादकता की वृद्धि के साथ श्रमिकों की आय में सुधार किया, परन्तु इन पद्धतियों का श्रमिकों के स्वास्थ्य के ऊपर भारी परिणाम दिखाई देने लगा। यह अमानुषिक है और मनोबल को तोड़ने वाला है। हम इसलिए यह सिफारिश करते हैं कि जहाँ कहीं भी परिणाम हेतु वेतन की पद्धति को अपनाया जाय, अधिकतम सीमा निर्धारित होनी चाहिए, जिसके आगे श्रमिक दुहरा उत्पादन के लिए कुछ भी प्रोत्साहन वेतन नहीं मिलना चाहिए। यह उस संदर्भ में है, जिसमें कि वर्कस्टडी पद्धति में दरों को निर्धारित करने के सिद्धान्त व्यापक रूप में निर्धारित होनी चाहिए। वर्तमान काल में टाइम एण्ड मोशन स्टडी का उपयोग श्रमिक का औसतन और स्टैन्डर्ड कार्य

निभाने के निर्धारण के लिये अपनाया जाता है, इस पद्धति को प्रबन्धिका द्वारा सुपरविजन की पद्धति के अध्ययन के लिए उपयोग करना चाहिए। हम पहले कह चुके हैं कि वैज्ञानिक स्तर का प्रोत्साहन वेतन के प्रारम्भ होने वाले बिन्दु को निर्णय करने के लिए कोई स्थान नहीं देना चाहिये, यह बिन्दु ऐतिहासिक स्तर द्वारा दी गई रेखा से कम होनी चाहिये, परन्तु कार्य निभाने के अधिकतम स्तर जिसके आगे कार्य करने पर श्रमिक के स्वास्थ्य पर खराब प्रभाव पड़ेंगे, को निर्धारित करने के लिए दरों को निकालने के सिद्धान्त में उपयुक्त परिवर्तन के साथ उपयोग किए जा सकते हैं। भिन्न-भिन्न प्रोत्साहन, जिनके साथ प्रोत्साहन वेतन जुड़ा हुआ नहीं है, जैसे कि कार्य सुरक्षा, कार्य समाधान, कार्य से सम्बन्धित सामाजिक सम्मान आदि भी उत्पादकता को बढ़ाने में पर्याप्त मात्रा में भूमिका निभाते हैं, यह प्रोत्साहन योजना के साथ होते हैं अथवा उनके बिना ही होते हैं। वे सभी पहलू जो कि अच्छे औद्योगिक सम्बन्धों को बनाने के लिए लाभदायक हैं और जिनका हम पहले विस्तृत उल्लेख कर चुके हैं, इस संदर्भ में अधिक आग्रह के साथ लागू होते हैं। श्रमिक को प्रबन्ध में भागीदार के रूप में व्यवहार किया जाना चाहिए, न कि उनके ऊपर केवल मात्र अफसराना व्यवहार हो। उसके अधिकारी शोध्याय, अच्छी रूप रेखा, भेष भूषा, अंग्रेजी बोलने वाले तथा कागजों पर हस्ताक्षर करने वाले भद्रपुरुष नहीं होने चाहिये वरन् मेहनत से काम करने वाले होने चाहिये। भारतीय मजदूर संघ की यूनियन का यह अनुभव है कि इन्जीनियरिंग और केमिकल्स के कारखानों में जहां पर उच्च-स्तरीय अधिशासी वर्ग कारखानों में खड़े होकर बड़ी कुशलता से कार्य को समाप्त करता है, और अपनी बाहों को चढ़ाये रहता है और दूसरे श्रमिकों के समान कपड़े गन्दा करता है, उत्पादकता बिना रोक टोक के बढ़ जाती है। श्रमिक हमेशा अपने आपको उस अधिकारी के अनुपात में अधिक महत्वपूर्ण और उच्चस्तर का अनुभव करता है, जिसका उत्पादन क्षेत्र में कभी भी परीक्षण नहीं हुआ है। ऐसा ही उन मामलों में भी होता है, जब प्रबन्धिका कार्य के एक उचित प्रवाह को बनाने में असफल होती है अथवा अच्छे औजार और मशीनें प्रदान नहीं करती। वह इस प्रकार से असम्बन्धित प्रबन्ध से उत्पन्न होने वाले सभी सुझावों को संदेह से देखता है, श्रमिक को उसके कार्य पर उसकी आवश्यकताओं के बारे में लगातार परामर्श लेना चाहिये और सहायता की जानी चाहिये।

इस संदर्भ में कार्य मूल्यांकन के समय विशेष देखदेख भी सहायक होती है, विशेषकर एकत्रित किये गये आंकड़ों का विस्तृत उपयोग होना चाहिए,

अभी भी भारत में ऐसा नहीं किया जाता, जहां पर विदेशों के ऐतिहासिक आंकड़े ही प्रयोग में लाये जाते हैं। श्रमिक को यह जानकारी होनी चाहिये कि किस प्रकार से प्रयत्न, शांति, दृष्टिकोण, आराम और विश्राम, हस्तक्षेप और देरी के विजय कार्य मूल्यांकन में प्रभावी होते हैं। कार्य-मूल्यांकन के भिन्न-भिन्न पद्धतियों में जैसा कि टाइम स्टडी रेफरेन्स डाटा, सिन्थेसिस डाटा, बेसिक मोशन डाटा (पहले से निर्धारित टाइम मोशन स्टडीज, आधारभूत मैथेड टाइम मेजर मेन्ट), हरएक मामलों की स्थितियों के अनुसार अथवा कार्य की प्रकृति के अनुसार उचित पद्धति के चयन को यूनियन को सूचित करना चाहिये। कार्य सम्बन्धी टेकनिक्स, सुरक्षा, कच्चा माल, उपकरण और प्रक्रियाओं की भरपूर प्रशंसा वर्कस्टडी विशेषज्ञों के कार्य की प्रारम्भिक कार्यवाही का एक हिस्सा है। जब श्रमिक यह जानता है कि उसका दर एकाएक नहीं लगाया गया है, बल्कि उसके लिए विश्राम और थकान का उचित प्राविधान किया गया है तो यह कार्य मूल्यांकन के लिए सम्मान करने लगता है, अन्यथा स्टाप वाच द्वारा लिए गए आकड़े उसके मन पर भयंकर प्रतिक्रिया करते हैं, मुख्यत: स्तर निर्धारित करते समय ऐसा होता है। परन्तु रख रखाव वाले काम में प्रबन्धिका को श्रमिकों के मुकाबले कुछ आगे ही रहना चाहिये।

वस्तुत: प्रबन्धिका को श्रमिकों के घरेलू चिन्ता में भी भागीदार होना चाहिये। एक सहृदय सुपरवाइजर अथवा प्रवन्धक, जो श्रमिक के परिवार के किसी भी अस्वस्थ सदस्य को देखने जाता है, उसके सुख दु:ख में भाग लेता है, आवश्यकता के अवसर पर वित्तीय और अन्य सहायता प्रदान करता है, स्वभावत: श्रमिक को प्रिय लगता है और श्रमिक सम्मान देता है। वे सभी प्रेरणायें जो उत्पादन को बढ़ा सकती हैं, काम के लिये और मनुष्य के लिये स्नेह ही सर्वोच्च और अत्यधिक विश्वासनीय हैं। धन का प्रोत्साहन वस्तुत: गौण है और ऊपर लिखे पहलू से प्रशंसा के रूप में स्वभाविक रूप से प्रस्फुटित होना चाहिये, जहां स्नेह भाव स्थापित होता है, उत्पादकता व्यक्तिगत त्याग द्वारा परिपूर्णता तक पहुंचता है। स्नेहभाव के पश्चात जिम्मेदारी के भाव का अनुगामी होगा। दूसरी ओर केवल मात्र धन की आवश्यकताओं से खिलवाड़ के अन्तर्गत मालिक-नौकर सम्बन्ध में विरोधी भाव निहित है। मातृभाव और बन्धुभाव कारखाने को एक व्यापक परिवार के रूप में बनाती है, जैसा कि एक बार भारतीय ग्राम था और जो अपनी वर्तमान विनष्टप्राय स्थिति में भी कुछ हद तक विद्यमान है, और

जो समाज का जीवमान और स्वाभाविक अंग अथवा इकाई था, जहाँ पर कोई भी ऐसे प्रमुख उथल पुथल नहीं होते, जहाँ सम्पूर्ण उत्पादन समाप्त हो जाय, क्योंकि भिन्न-भिन्न गतिविधियों के आपसी सम्बन्ध अच्छी प्रकार से व्यवस्थित थे और हैं, तथा ग्राम की समृद्धि के साथ सभी समृद्ध होते थे, ग्राम के दुख में सभी दुखी होते थे, इस भाँति आधुनिक उद्योग अथवा कारखाना भी समाज का एक जीवमान अंग अथवा इकाई बन जाना चाहिए। तभी संघर्ष के स्थान पर सहयोग उत्पन्न होगा और वितरण उत्पादन की एक स्वाभाविक गतिविधि बन जायगी।

उत्पादकता लाभ में भागीदारी और अभिनवीकरण

हमने दो विचार अर्थात् उत्पादकता लाभ में भागीदारी होना और अभिनवीकरण--दोनों को ही इकट्ठा लिया है, यद्यपि ये दोनों राष्ट्रीय श्रम आयोग द्वारा दिये गये प्रश्नावली में इकट्ठे नहीं दिये गये हैं। दोनों के समान ही पक्ष हैं अर्थात्--अर्थशास्त्रीय प्रक्रियाओं से उत्पन्न बचत के लक्ष्य। हम पहले ही प्रस्तुत कर चुके हैं कि इन बचतों की व्यापकता उस पद्धति से प्रभावित होगी, जिसके अन्तर्गत उन्हें अर्थव्यवस्था की बढ़ोत्तरी में अन्ततोगत्वा उपयोग किये जायेंगे। उत्पादकता से उत्पन्न होने वाले लाभ को किस सीमा तक श्रमिक को छोडना चाहिए और किस हद तक अभिनवीकरण की प्रक्रिया को स्वीकार कर कष्ट सहने चाहिए-- वाले प्रश्न का उन भिन्न-भिन्न पूंजी सम्बन्धी निर्णयों के संदर्भ में ही निर्णय किया जा सकता है, जो कि एक विशेष प्रकार के कष्टों को सहने के अन्तर्गत किए गए हों। वास्तव में हम इस तर्क को इससे आगे बारम्बार नहीं दुहरा सकते, यह बिलकुल सम्भव है कि बहुत सी विशेष परिस्थितियों में उत्पादकता में बढ़ोत्तरी के विशेष योगदान नई पूंजी के लगाने पर सुधरी हुयी टेकनालाजी के लागू करने अथवा सुधरी हुयी प्रबन्धकीय कुशलता के लागू करने के अन्तर्गत हुयी हो। श्रमिक केवल मात्र इसमें सहयोग करने वाला पक्ष हो। परन्तु इससे यह तथ्य नहीं निकलता कि उत्पादकता के लाभ पूंजीपति अथवा तकनीकी विशेषज्ञों और प्रबन्धकों को ही दिये जांय। तो भी पूंजी और तकनीकी ज्ञान व्यक्तियों को समाज की प्रक्रियाओं के अन्तर्गत दिये जाते हैं और इस संदर्भ में तुरन्त अथवा कुशल तथ्यों के मुकाबले में सामाजिक उद्देश्यों की आवाज अधिक होती है। वितरण में वास्तविक विवाद खपत और बचत में है अथवा

उत्पादन हेतु पूंजी के पुनः लगाये जाने वाले कार्यक्रम के दावे का तात्कालिक खपत के ऊपर होगा। यदि यह कार्यक्रम रोजगारमूलक हैं, जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं, तब श्रमिकों को बचत द्वारा लगाई गयीं पूंजी के लिये खड़ा होने हेतु कह सकते हैं। पूंजी और श्रम में अपने अपने हिस्से को निर्धारित करने वाली पद्धति के सम्बन्ध में वही सिद्धान्त लागू हो सकता है, जो हम पहले प्रस्तुत कर चुके हैं, जब हम वेतन नीति और औद्योगिक सम्बन्धों की चर्चा कर रहे थे और जहाँ पर राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद के फारमूले का उल्लेख किया था। इस भगीदारी के समूचे पक्ष में वेतन के अन्तर के बारे में हमारे सिद्धान्त ठीक उतरते हैं। उत्पादकता लाभ के विवेचन के संदर्भ में जो उन तथ्यों की महत्ता के अनुसार हैं, जिनके एक सामूहिक प्रयत्न में बिलीनीकरण के अन्तर्गत अन्तिम सुधार होता है, हमारा यह विचार है कि ऐसा प्रयत्न नहीं किया जाना चाहिये। यह अनावश्यक है तथा बाल की खाल निकालने के समान घातक उसी प्रकार हो सकता है, जैसा पैतृक सम्पत्ति के बाँटने पर विवाद उठते हैं। सभी का मूल उद्योग (Mother Industry) के साथ समान सम्बन्ध है और समान हक है तथा जिसके कार्यकलाप अभिभाजित है। इस प्रकार के विवेचन के सही उपयोग, जो कि उत्पादन के आगामी कार्यक्रमों के बारे में प्रस्तुत किया जाता है, वस्तुतः आपरेशन रिसर्च के विषय से सम्बन्धित है अथवा उसमें निहित है, क्योंकि आपरेशन रिसर्च सर्वोच्च प्रकार की पद्धति है, जो कि गणित की सहायता से वर्तमान विज्ञान ने भिन्न भिन सम्भावनाओं और विकल्पों के बारे में प्रस्तुत किया है तथा जो श्रम, मशीन, सामग्री तथा धन सम्बन्धी नियंत्रण और प्रबन्ध में उत्पन्न होते हैं। इसकी विशेष पद्धति परिस्थितियों का वैज्ञानिक नमूना बनाकर नियंत्रण की व्यूह रचना बनानी है जो भिन्न भिन्न प्रकारों के व्यवहारों को मापांकन करने, परस्पर तुलना करने और भावी परिस्थितियों के अनुमान लगाने से सम्बन्धित है। इसके भिन्न भिन्न तकनीक ये हैं :—Linear Programming, Programme evolution and Renew techinque (PERT) जो कि Optinum path और critical path, in put—out put analysis। श्रमिक की एक विशेष औसत आय को ध्यान में रखकर तथा एक विशेष परिस्थितियों के चित्रण के अन्तर्गत दोहजार देने के उद्देश्यों को प्रमुख स्थान प्रदान करने के अन्तर्गत किसी कारखाने के सम्बन्ध में पूंजी लगाये जाने वाले निर्णय से पूर्व इस प्रकार के विवेचन की जानकारी होनी चाहिये। राष्ट्रीय स्तर की इसी उद्देश्यों की पूर्ति समष्टिगत अर्थव्यवस्था macro economics के लागू करने से प्राप्त हो सकता है। सांख्य

अर्थशास्त्र economitrics अब हमें करीब करीब सभी आर्थिक सम्बन्धों के बारों में स्तैतिस्कीय विवरण दे सकता है। किसी कारखाने से सम्बन्धित उत्पादन और इन्वेन्टरी सम्बन्धी निर्णय भी सरल सांख्य अर्थशास्त्र के लागू करने से किये जा सकते हैं। किसी एक कारखाने अथवा उद्योग सम्बन्धी लगाई जाने वाली पूंजी के निर्णयों के बारे में निर्णय सम्बन्धी प्रक्रिया में आवश्यक श्रमिकों की संख्या का गणितीय नमूना बनाकर परिणाम निकालना कठिन नहीं है। यह निर्णय अपेक्षित परिणामों के संदर्भ में लगाई जाने वाली पूंजी की संख्या और पद्धति दोनों के बारे में हो सकती है। हम यह विचार रखते हैं कि उत्पादकता लाभ का भिन्न भिन्न कारणोंवश विवेचन इस संदर्भ में नहीं लाना चाहिए, ताकि उत्पादकता लाभ में भागीदारी होने पर प्रभाव डाले। ध्यान रहे कि आपरेशन रिसर्च पद्धति भविष्य सम्बन्धी विकल्पों के निर्धारण के लिए है। पूंजी की मल्कियत अथवा तकनीकी और अन्य ज्ञान की स्थिति इन सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा समाज से अधिक धन, सुविधा अथवा सुविधायें लेने के लाइसेन्स के रूप में नहीं देखना चाहिए। इन वस्तुओं के अधिग्रहण करने वाले भगवान और समाज के ट्रस्टी हैं और भगवान तथा समाज ही वास्तविक एवं कुशल मालिक है, उन्हें अपने सम्पूर्ण अधिकार स्वामी के सेवार्थ प्रस्तुत करनी चाहिए। उन्हें इन पक्षों के लिए समय समय पर समाज द्वारा प्रस्तुत मान्ताओं के अनुसार पारितोषिक मिलना चाहिए और मिलेगा। मौलिक विचार जो इन मान्यताओं के लिए हैं, के बारे में वेतन अन्तर वाले विषय पर चर्चा करते समय प्रस्तुत की चुकी है। जब एकवार उत्पादकता लाभ में भागीदार होने के बारे में इन दो तथ्यों पर निर्णय लिया जा चुका है, अर्थात एक ओर तत्कालिक खपत और दूसरी ओर विकास हेतु बचत का पूंजी के रूप में लगाना (यह विभाजन विकास परियोजनाओं के रोजगार देने वाले सम्मान पर निर्भर करते हैं, जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है) तत्कालिक खपत के लिए पृथक किए गए भाग हमारे द्वारा प्रस्तुत किए गए सुझावों के अलावा उन योजनाओं के लिये होंगे, जिन्हें हम दो भागों में बाटना चाहेंगे अर्थात् उपभोक्ता का अंश और श्रमिक का अंश। फिर भी हमारे द्वारा प्रस्तुत की गयी योजना के अन्तर्गत उपभोता का अंश पहले से ही पुनः पूंजी लगाने के अन्तर्गत पदा होने वाली रोजगार देने में निहित है, क्योंकि इस प्रकार के लागत सम्बन्धी निर्णय आय व वितरण के लिए होते हैं, जिनका स्वरूप रोजगार देने के लिए होता है तथा मूल्य स्तर की कटौती में होता है, इसलिये हमारे द्वारा प्रस्तुत योजना के अन्तर्गत उत्पादकता लाभ का तात्कालिक खपत

सम्बन्धी भाग का पूरा हिस्सा उन लोगों में वितरण के लिए उपलब्ध है, जिन्होंने इस लाभ को प्राप्त करने के लिए काम किया, वेतन अन्तर के लिए अपनाये गये मान्यताओं के आधार पर बितरण होना चाहिये। दूसरा भाग जिसे पुनः पूंजी के रूप में प्रयोग किया जाता है, उद्योग में उन व्यक्तियों को सेयर के रूप में मिलना चाहिये और जिसे एक कारखाना अथाव उद्योग की एक इकाई क्रमबद्ध श्रमिकीकरण की योजना की ओर उन्मुख एक विशेष स्तर पर अपने आपको पाती है।

अभिनवीकरण की योजना में उस विचार का व्यापक स्वरूप अपनाना चाहिए, जिसके अन्तर्गत किसी कारखाने अथवा उद्योग की एक इकाई को व्यापक परिवार के रूप में माना जाता है और ऐसा सभी कारखानों तथा एक ही उद्योग में काम करने वाली इकाइयों को इकट्ठा कर एक बड़े व्यापक परिवार के रूप में मानना चाहिये। अभिनवीकरण की योजना की व्यापक मान्यता योजनाधिकारियों से प्राप्त होना चाहिये, जिन्हें भिन्न भिन्न पक्षों को ध्यान में रखना चाहिये, जैसा कि सम्पूर्ण रोजगार प्रधान (यह .....infrostructure के अधिक स्पष्ट होगा), प्रतिरक्षा आवश्यकताओं (जो महत्व की औद्योगिक इकाई मे कुशलता लाने के सम्बन्ध में है) और व्यापक योजना की ब्यूह रचना जिसमें आयात उपकरणों के लिये भीतरी उपकरणों की डिजाइन और उत्पादन, आर्थिक उत्थान के क्रम आदि सम्मिलित हैं। अभिनवीकरण की ऐसी योजनाओं से जो लाभ समुदाय प्राप्त करेगा--का ऐसी स्थिति में ही निर्धारण होना चाहिये। इस विषय को अभिनवीकरण के लाभों को बांटने में न्यायिक निर्णय करते समय पुनः नहीं प्रस्तुत होना चाहिए। लाभ का नियोजन और श्रमिकों में वितरण की नीति को अपनाना चाहिए, जिसे वेतन अन्तर के अध्ययन में उल्लेख किया गया था, अर्थात् १५ वें श्रम सम्मेलन की मौलिक सिफारिशों की धारा २ को उस स्थान पर प्रगट नहीं होने चाहिये, जहां वह इस समय पाई जाती है, जैसा कि हमारे द्वारा प्रस्तुत योजना के अन्तर्गत सामाजिक आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन होने के पश्चात होगा। वर्तमान सिफारिशें विषय को मौदेबाजी के लिये व्यापक स्थान प्रदान करती हैं और इसलिये लगातार तथा दुबारा घटित होने वाली कठिनाइयों के लिये स्रोत प्रदान करती है। हम इस परिस्थिति को अधिक स्थायी और स्वस्थ पद्धति द्वारा बदलाना चाहते हैं, (अभिनवीकरण को अपनाने में यह धारा समस्या का प्रमुख केन्द्र अथवा स्रोत बनी हुई हैं)। जहाँ तक अभिनवीकरण

के लिये मौलिक और व्यापक कार्यवाही का सम्बन्ध है, प्रश्नावली का परिशिष्ट की शेष धारायें पर्याप्त उपयुक्त हैं और उन्हें बनी रहनी चाहिये। हमारे विचार में एक आवश्यकता है, जिसके अनुसार अभिनवीकरण के वर्तमान विचार प्रणाली में एक और दिशा जोड़ी जानी चाहिये। वर्तमान सिफारिशों का बोझ छटनी और कार्यभार सम्बन्धी नीतियों पर काफी प्रभावी है। इन पक्षों को तुच्छ और अस्पष्टवादों अथवा कागजी समझौतों में परिणित किया जाता है, जिन्हें वास्तविक स्वरूप देने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। अभिनवीकरण के कार्यक्रमों को अपनाने के पश्चात व्यवस्थापिका ऐसे माध्यम व ढंग ढूढ़ती है कि अभिनवीकरण के अन्तर्गत पाये गये फालतू स्टाफ को निलम्बित करदे अथवा बर्खास्त कर दें। उन मामलों में जहाँ ऐसा नहीं किया जाता, जैसाकि सार्वजनिक क्षेत्र मे पाया जाता है और जहाँ प्रबन्ध कुशलता बहुत कम ही अपनायी जाती है, ऐसा पाया गया है कि फालतू स्टाफ सेवाओं को कमजोर बना देता है, जैसा कि पूर्व उल्लेख किया गया है। अभिनवीकरण द्वारा किसी भी श्रेणी अथवा विभाग में फालतू किये गये स्टाफ को कभी भी सही प्रकार का व्यवसाय अथवा लाभकारी और उत्पादकीय रोजगार अभिनवीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत नहीं दी जाती। इसे तात्कालिक अनिवार्य बोझ के रूप में ढोया जाता है, ताकि एक उपयुक्त समय पर इसे हल्का किया जा सके। ऐसा यह इसलिए है, क्योंकि अभिनवीकरण के निर्णय और इस निर्णय के पश्चात बदली हुई परिस्थिति के अन्तर्गत फालतू स्टाफ के बने रहने में मौलिक विरोध है। अभिनवीकरण शब्द का परिभाषा से ही यह अर्थ है कि स्टाफ के मामले में परिवर्तन। इसके द्वारा भिन्न भिन्न हस्तकलाओं में कमी प्रगट करना कुछ परम्परागत कार्यों, हस्तकलाओं, दृष्टिकोणों और सम्बन्धों को फालतू बनाना है। कार्य के तथ्यों और संगठनात्मक ढाँचे को बदलना है। यह एक नयी प्रकार की पद्धति है, जहाँ पर भिन्न भिन्न बलों के एक संतुलन से भिन्न दूसरे संतुलन की ओर परिवर्तन लाया जाता है। इसे ऊपरी परिवर्तनों द्वारा बड़ी कठिनाई से अपनाया जा सकता है। सामाजिक उद्देश्यों की प्राथमिकता के अन्तर्गत अभिनवीकरण को रोकना एक विषय है तथा यह कहना दूसरा विषय है कि इसे संगठनात्मक अनुशासन में मानवीय विचारों को लागू कर बिना किसी को कष्ट दिये प्राप्त किया जाना चाहिये। दूसरा विषय जो कि भारतीय श्रम सम्मेलन की सिफारिशें प्राप्त करने की कोशिश करती है, समस्या का कोई हल नहीं प्रदान करती। अभिनवीकरण की योजना के अपनाने पर वास्तविक निदान एक कारखाने में अथवा चालू इकाई में बड़ी कठिनाई से प्राप्त

की जा सकती है। हम इस विचार के हैं कि यदि औद्योगिक समिति अभिनवीकरण की योजना को अपनाना चाहती है तो इसे इस प्रक्रिया के नये मानकों के अन्तर्गत आवश्यक कार्य सामग्री, कुशलता, कार्य सम्बन्ध, व्यक्तियों की नियुक्ति के लिए अपने संगठन को इसके अनुरूप ढालने हेतु तुलनात्मक दृष्टि से स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए। इन मामलों के बारे में निर्णय करने हेतु उपयुक्त अधिकरण वर्कस् कमेटी अथवा संयुक्त प्रबन्ध समिति होगा, जिसके कि कार्य को हम लोगों ने औद्योगिक सम्बन्धों वाले प्रकरण में स्पष्ट किया है। उदाहरणार्थ--हमने कहा है कि किसी व्यक्ति को छटनी अथवा निकाल बाहर करने हेतु निर्णय वर्कस् कमेटी के सर्वसम्मति निर्णय से लिया जाना चाहिए। सम्पूर्ण संगठन से परिवर्तन अथवा ऊपर उठाने के प्रक्रिया में कुशल अन्तरण के लिए कुछ कार्य और व्यक्तियों का अनावश्यक हो जाना अवश्यभावी है। संगठन तथा व्यक्तियों की अच्छाई के लिए यह प्रश्न सीधी प्रकार से सुलझाया जावे, जिसमें कि उपयुक्त वैकल्पिक नौकरियाँ अथवा आंशिक बेकारी के लिए बेकारी का बीमा अथवा छटनी के लिए प्रभति क्षतिपूर्ति दी जा सकती है। हम अन्तिम तरीके को बहिष्कृत करना चाहेंगे, क्योंकि इसके द्वारा सक्षम शरीर वाले व्यक्तियों की छटनी कल्पित होती है आंशिक बेरोजगारी के आधार पर बेरोजगारी भत्ता कम से कम (जितना सम्भव हो) समय के लिए होना चाहिये और यह पिछली नौकरी के अनुरूप पूरा वेतन और मँहगाई भत्ते के समान होनी चाहिये। पुनः रोजगारी शीघ्र होनी चाहियें और पिछली रोजगारी की वेतन और सामाजिक सम्मान से कम नही होनी चाहिये। प्रत्यक्षतः यह उस कारखाने के लिए जो अभिनवीकरण के कार्यक्रम को अपना रहा है असंभव प्रतीत होता है परन्तु ऐसा करना उद्योग के लिए संभव हो सकता है और यह उद्योग की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिये। आर्थिक संगठन के हमारे समूचे दृष्टिकोण में हम उस स्वीकृत सामाजिक पद्धति का रूप सम्मुख रख रहे हैं जिसको विस्तृत अथवा व्यापक प्रक्रिया एवं प्रणाली सम्बन्धी परिवार कहेंगे, इसे (जगत्वां जगत की कल्पना इससे परिभाषित होती हैं। अभिनवीकरण से पैदा होने वाली आंशिक बेरोजगारी के मामले में हम यह विचार रखते हैं कि पूरे उद्योग को एक इकाई के रूप में देखना चाहिये। हमें यह अवगत है कि उद्योग को राष्ट्रीय संगठन के अन्तर्गत एक मिली जुली इकाई मानने के विचार का आर्थिक अनुशासन के विचारों और नीतियों का व्यापक प्रभाव पड़ता है। हम इस पचिका के अन्तिम अध्याय में इस व्यापक पर पक्ष अपने विचार प्रस्तुत करेंगे। वेतननीति राष्ट्रीय पूंजी लगाये जाने वाले ढांचे के पक्षों

के अन्तर्गत हमने इस कल्पना के बारे में पहले ही अपने विचार प्रस्तुत किए हैं जो कि सार्वजनिक नीति, कीमतों और कर पद्धति, कार्य के अनुसार, प्रतिनिधित्व अथवा उद्योग सभा के अन्तर्गत आती हैं। सामाजिक आर्थिक ढाँचे पर हमारे विचारों के अन्तर्गत अभिनवीकरण के द्वारा तकनीकी नयी पद्धति का लागू करना भी उद्योग में निर्णय करने वाली गठन के रूप में प्रगट होती है। वह सामूहिक समिति के आधार पर एक प्रकार की औद्योगिक समिति बननी चाहिये अथवा यह और भी अच्छा हों कि यह एक औद्योगिक सभा के अन्तर्गत हो जो इस प्रकार के कार्यक्रम और विषयों को चालित करे। यदि यह आवश्यक हो तो उद्योग को इस उद्देश्य के लिए एक औद्योगिक फन्ड खड़ा करना चाहिये जिसका उपयोग कल्याण, बेरोगारी, सहायता के लिए उपयोग किया जा सके और इससे भी बढ़कर उपयुक्त तकनीकी, वैज्ञानिक और संगठनात्मक शोध के खर्चे का वहन कर सके जो कि तकनीकी और उत्पादकता क्रान्ति की प्रगति को सहज और गतिशील बना सके। अभिनवीकरण अथवा उत्पादकता के अन्य महत्व पूर्ण पद्धतियों से उठने वाले श्रमिक और सामाजिक विषयों को हल करने के लिये ढाँचे के परिवर्तन सम्बन्धी निर्णय लेना होगा। विज्ञान का प्रभाव इस प्रकार की सामाजिक आर्थिक गठन के बनाने पर समावेश किया जा सकता है और इसका स्वागत किया जा सकता है। इस सामाजिक आर्थिक गठन के अन्तर्गत भिन्न भिन्न उद्योग कर्मेन्द्रियों के समान होंगे।

स्वाचालितीकरण

हमारे देश में स्वाचालितीकरण के प्रश्न पर व्यापक चर्चा हो रही है हम इस विषय में और कुछ नहीं जोड़ना चाहते। समूचे वाद-विवाद में दो प्रचलित तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं, एक ओर कुशलता और दूसरी ओर छटनी। नियोजक यह विचार प्रत्तुत करते हैं कि कम्प्यूटर्स को चालित करने के परिणाम स्वरूप कोई छँटनी नहीं की जायेगी पर परन्तु यह उनका खराब तथ्यों को मीठी वाणी में प्रस्तुत करने का तरीका है। कम्प्यूटर्स का अस्तित्व ही रोजगारी की दशा पर काफी प्रभाव डालती है एक कम्प्यूटर्स बिना किसी एक काम पर बहुत बड़ी संख्या में लोगों को रोजगारी निश्चित ही प्राप्त होगी वर्ना उसके कि जब इसका उपयोग किया जायेगा। यदि ऐसा नहीं है तो यह (कम्प्यूटर) अपने उद्देश्य को ही असफल कर देता है। प्रत्यक्ष रूप में अथवा छिपी हुई बेरोजगारी अथवा

स्वाचालितीकरण के द्वारा श्रमिक एक कार्य से दूसरे कार्य पर तवादला होने को मना नहीं किया जा सकता अर्थात् इसे स्वीकार करना होगा। यह महत्वपूर्ण है कि किसी भी नियोजक ने दो भिन्न भिन्न परिस्थितियों में जो कम्प्यूटर के प्रयोग पर अथवा न प्रयोग करने पर पैदा होती है के लिए स्टाफ आवश्यकताओं के तुलनात्मक संगठनात्मक विवरण प्रस्तुत नहीं किये हैं। इस प्रकार के तथ्य प्रस्तुत करने वाले नियोजक श्रमिक को अथवा श्रमिकों की स्वाचालितीकरण विरोधी समिति का समाधान करने हेतु निमन्त्रण देती ताकि ऊपर उल्लेख किए गए दो संगठनात्मक विवरणों का बारीकी से निरीक्षक कर सकती और इन तथ्यों के आधार पर वाद-विवाद आगे बढ़ सकता। उन्होंने ऐसा नहीं किया क्योंकि उनकी प्रस्तावना ही आधारभूत बेईमानी की है स्वाचालितीकरण के लिए अधिक गम्भीर और ईमानदार तर्क इन्प्रास्ट्रक्चर (Inprastructer) अथबा आधारभूत उद्योगों में इसकी आवश्यकता है जहाँ पर रोजगारी की स्थिति पर कई गुना अधिक प्रभाव का अनुमान लगाया जाता है अथवा इसकी आवश्यकता आयात वस्तुओं के स्थानापन्न में अथवा निर्यात सम्बन्धी उद्योगों में स्पर्धा के आधार पर अथवा परिरक्षण उद्योगों में है। वर्तमानकाल में कम्प्यूटराइजेशन के उपयोग के लिए तर्क स्तैतकीय अथवा गणित के उन कार्यों के लिए प्रस्तुत की जा रही हैं जहाँ या तो जहाँ कम्प्यूटर की सहायता बिना आंकड़े नहीं लगाये जा सकते अथवा आंकड़ों का मनुष्य द्वारा सर्वोच्य पद्धतियों के उपयोग से करने पर इतना लम्बा समय लेता है कि जब विश्लेषण के परिणाम उपलब्ध होते हैं तब तक उसकी उपयोगिता ही समाप्त हो जाती है ध्यान रहे कि मनुष्य द्वारा सर्वोच्च आकड़े लगाने वाले ढंगों में दफ्तर के आंकड़े लगाने वाले साधारण उपकरण भी शामिल हैं। कम्प्यूटर काल को शीघ्रतम लाने के लिए यदि कहीं जल्दबाजी हैं तो सुरक्षा क्षेत्र में इसकी ओर सर्वप्रथम ध्यान देना चाहिए। देश की स्वन्त्रता सभी प्रकार के बलिदान से ऊपर है इसलिए युद्ध गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में जहाँ पर कम्प्यूटराइजेशन के कारण विजय और हार के साथ भारी नुकसान तक अन्तर पड़ता हैं, स्वाचालितीकरण को हरी झन्डी दी जानी चाहिये। शेष सभी क्षेत्रों में निर्यात करने हेतु उद्योगों के तर्क कोई तथ्य नहीं रखते। चीनी उद्योग के उदाहरण का उल्लेख करते हुए हम पहले ही संकेत कर चुके हैं किस प्रकार पूरी अर्थ व्यवस्था को वास्तविक रूप से निर्यात सम्बन्धी दिशा दी जा सकती है। कम्प्यूटराइजेशन के उपयोग से बनाई गई वस्तुओं का प्राश्चात्य देशों से मुकाबला करने वाली स्थिति अभी बहुत दूर है। पूरे भारत में

पचास कम्प्यूटरों के मुकाबले में इंगलैण्ड के पास २ हजार सात सौ कम्प्यूटर्स हैं। एक वर्ष पूर्व यू० एस० ए० के पास ४३ हजार से अधिक कम्प्यूटर्स थे और कोई नहीं जानता कि वह देश शीघ्र क्रान्ति में जेट गति की गतिविधियों से कितना तेजी से आगे बढ़ रहा है। इन्फ्रास्ट्रक्चर (Inprastructure) में कम्प्यूटर्स के उपयोग के बारे में एक और तथ्य प्रस्तुत किया जाता है जिसके अनुसार इसका उपयोग भूमि को अधिक स्थिर रूप से और बहुतायत उपजाऊ बना देगी जो कि सिंचाई की पद्धतियों की डिजाइन, फसल की भविष्यवाणी गति को बढ़ाने, पेड़ लगाये जाने और फसल लगाये जाने वाली भूमि में फसलों और क्रमबद्धता को नियन्त्रण करना, मौसम के बारे में भविष्यवाणी कर सहायता प्रदान करना और मौसम तब्दीली के तथ्यों को क्रमबद्धता के अनुसार नियन्त्रण करना शामिल है। हम यह प्रकट करते हैं कि कम्प्यूटर के इस प्रकार चयन किये गये उपयोग से राष्ट्रीय और उत्पाद में वृद्धि होगी और अर्थ व्यवस्था में श्रमिकों को उच्चे सही वेतन देना संभव होगा। परन्तु यह तर्क जहाँ तक इस देश में प्रस्तत करने का प्रश्न है जो उस विक्रेता के समान है जो कम्प्यूटर के बेचने पर तुला हुआ है वनस्पति एक अर्थशास्त्री अथवा नीति निर्धारित करने वाले विशेषज्ञ के जो योजना के नमूनों को अन्तिम रूप देने के पहले सभी प्रकार की आर्थिक और सामाजिक कीमतों को ठन्डे दिल से हिसाब लगाता है। यू० एस० ए० में एक उच्चस्तरीय आयोग जिसका नाम है 'तकनीकी स्वाचालितीकरण और आर्थिक प्रगति पर राष्ट्रीय आयोग (The National Commission on lechonoloryad automation and economic prosms) ने इस तथ्य से इन्कार नहीं किया है कि स्वाचालितीकरण के कार्यक्रम को स्थगित करने से अर्थ व्यवस्था निश्चित ही अधिक रोजगारी प्रदान कर सकती है। भारतीय परिस्थिति में इस बात की आवश्यकता है सर्वप्रथम सम्पूर्ण रोजगारी का आधार प्रस्तुत किया जाय और तत्पश्चात् राष्ट्रीय आर्थिक व्यूह रचना के द्वारा एक असंतुलित स्थति से ऊंचे और अधिक उत्पादन वाले संतुलन की ओर क्रमबद्ध बढ़ा जाय। इस व्यूह रचना के अन्तर्गत भिन्न भिन्न उद्योगों को न्यायिक पक्ष प्रदान किया जाय जिसके परिणाम भारत में औसतत आदमी की उत्पादकता और वास्तविक आमदनी बढ़ सकेगी। स्वाचालितीकरण के समान उच्चस्तरीय तकनीकी उपयोगिता के लिए वास्तविक चिन्ता इस दूसरी और तत्पश्चात् क्रमों में आ सकती है इसलिए भारतीय उद्योग में कम से कम दस वर्ष के लिए स्वाचालितीकरण के आने पर कानूनी रुकावट लानी चाहिये। इसका सुझाव देते समय हमें यह विश्वास है कि एकबार

नागरिक क्षेत्र के किसी विभाग में कम्प्यूटर के लिये यदि दरवाजा खोल दिया गया तब यह दूसरे विभागों में भी अपना रास्ता बना लेगा। इसलिये स्वाचालितीकरण के ऊपर हमारा विचार अन्य ट्रेडयूनियन्स के समान हैं जो भारतीय उद्योग में हमारी आर्थिक प्रगति के इस दौर में अथवा उस समय तक जब तक सम्पूर्ण रोजगार प्राप्त नहीं की जाती स्वाचालितीकरण के लागू करने के विरोधी हैं। एकबार सम्पूर्ण रोजगार के प्रथम लक्ष्यों तक पहुंचने तक किसी उचित विधि पर वार्तालाप की जा सकती है।

अन्य पक्षों की भूमिका

उत्पादन के भिन्न भिन्न तथ्यों से सम्बन्धित उत्पादकता की बढ़ोत्तरी में सरकार प्रबन्ध और श्रम, सभी को बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी। सर्व प्रथम सरकार की अपनी गतिविधियों से पूरी अर्थव्यवस्था के लिये उत्पादकता को बढ़ाने के लिये अग्रेसर होना पड़ेगा। इस उद्देश्य हेतु सरकार को अर्थव्यवस्था के कठिनाई से उपलब्ध तथ्यों को पहचानना होगा जैसे कि पूंजी, परिरक्षा सम्बन्धी कच्चामाल, भूमि, विदेशी मुद्रा आदि और अर्थव्यवस्था के लिये सबसे अधिक उत्पादन देने वाली पूंजी के ढांचे की योजना करना होगा जो कि पूरी रोजगारी तक पहुंचने के सर्वप्रथम सामाजिक लक्ष्य के एक रूप होगी। तत्पश्चात् सभी नागरिकों के जीवन स्तर में न्यायिक बढ़ोत्तरी से एक रूप होगी। इसे अपने नियन्त्रित मैकेनिज्म को बड़ी बुद्धिमानी से प्रयोग करना होगा और निम्नलिखित को ध्यान में रखना अनिवार्य होगा। वर्तमान पूंजीरत उपकरण के उपयोगके घटने की प्रक्रिया अभिनवीकरण की वास्तविक आवश्यकतायें, निरन्तर एक प्रकार की नीति द्वारा विदेशी बाजार को बनाना, वेतन और मूल्य नीति का लागू करना, श्रम और औद्योगिक नीति को लागू करना, आपूर्ति सम्बन्धी बजट, अच्छे इन्फ्रास्ट्रक्चर (Inprastracture) का विभाग करना, गुणात्मक शिक्षा, उत्पादन दिशा वाली कर नीति, और सामाजिक लेन देन में कुशलता, मितव्ययी और ईमानदारी का अपना उदाहरण प्रस्तुत करना और सेवाओं में से सभी प्रकार के भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद और आलस्य को दूर करना। पूरी अर्थव्यवस्था को उत्पादकता की दिशा प्रदान करने के लिये सरकार को वस्तुतः एक प्रमुख कार्य निभाना हैं। सरकार यह अपने उदाहरण और उचित गतिविधियों

द्वारा कर सकती हैं जो राष्ट्रीय विशेषताओं को प्रोत्साहन दे और साथ ही साथ अति अधिक उपयोगिता को ध्यान में रख और एक दृष्टि प्रदान कर वैज्ञानिक शोध की योजना द्वारा होगा। औद्योगिक अथवा कारखाने की योग्यता के लिए दिन प्रतिदिन के विस्तृत तथ्यों में प्रबन्ध को भी एक महत्वपूर्ण भमिका अदा करनी हैं। यह विशेष रूप से देखना चाहिए कि उत्पादन सम्बन्धी शेड्टलिंग (Scheduling) ठीक प्रकार से नियन्त्रित है, मनुष्य-मशीन-रेखाचित्र वैज्ञानिक विश्लेषण वेज्ञामिक ढंग से बनाया गया है और उचित उपयोग में लाया गया है, एक अच्छी प्रकार से डिजाइन की गई पद्धति और कार्य का अध्ययन किया गया है, और उसे ठीक रूप से चालू किया गया गया है श्रम मापांकन के विश्वस्थ आकडों पर ठीक प्रकार की प्रोत्साहन योजना बनाई गई है, और माल के प्रवाह सम्बन्धी चार्टस् विश्लेषण के उपयोग से प्रवाह में दूविधाओं को रोका गयाहै, आपरेशन रिसर्च के उपयोग से लागत, बजट, इनवेन्टरी, नियन्त्रण किया जाता है, उपयुक्त, व्यक्तिगत और पदोन्नति नीतियों को ठीक रूप से बनाये रखने के कारण श्रमिकों के मनोबल को बनाये रक्खा जाता है, औजार और उपकरणों को अच्छी प्रकार से डिजाइन किया जाता है, बाजार सम्बन्धी शोध और भविष्यवाणी अच्छी प्रकार से की जाती है और इन जानकारी प्राप्त तथ्यों के आधार पर गुणात्मक नियन्त्रण स्थापित किया जाता है, प्रशिक्षण और नैपुण्यवर्ग के कार्यक्रमों द्वारा लगातार बदलती हुई सामाजिक और श्रमिक परिस्थिति के अन्तर्गत निरीक्षण की गणात्मक स्थित को ठीक रूप से बनाये रक्खा जाता हैं जो कि व्यक्तिगत विकास कार्यक्रम के लिए मामलों पर आधारित और अध्ययन पर आधारित अपनाये जाते हैं, अवरोधक रख-रखाव और मरम्मत द्वारा मशीन की आयु और कुशलता की सुरक्षा की जाती हैं जो कि पूंजी की उत्पादकता की कुंजी है, अच्छे विशेषज्ञों द्वारा संचार और अनुमान सम्बन्धी जानकारी दी जाती है और बहुत सारे अन्य निर्णयों जो कि श्रमता-विश्लेषण, योजना और नियन्त्रण के अन्तर्गत आते हैं, जो सभी तथ्यों के व्यापक विश्लेषण द्वारा शीघ्र रूप से किये जाते हैं। प्रबन्धकों को भविष्य पर दृष्टिकोण रखना चाहिये और इस उद्देश्य हेतु, आर्थिक उत्थान के प्रोत्साहन के लिए शोध और विकास इकाई को अनिवार्य रूप से स्थापित करना चाहिए और उसे व्यवस्थित रूप से रखना चाहिये। यह उद्योग के भीतर एक प्रकार उपयोगी शोध है जिसके अन्तर्गत इसके कार्य और उससे होने वाले लाभ की पद्धति के मापांकन द्वारा उत्पाकता लाभ का आर० एण्ड डी० (R & D) के योगदान के सम्बन्ध के आधार पर व्यापक उद्देश्यों के लिए उपयुक्त नियन्त्रण

बनाया जा सकता है। वस्तुत: प्रबन्ध को उत्पादन दिशा प्रदान करने वाली योजनाओं पर काम करना चाहिये। ट्रेड यूनियन्स को विशेष रूप से सावधान रहना होना कि जब वह धीमे काम, नियम के अनुसार काम, अतिरिक्त काम पर प्रतिबन्ध अथवा अन्य काम रोको ढंग अथवा जोश को समाप्त करने वाले अभ्यास, के लिये जब वह सिफारिश करे तो वह संगठनात्मक अनुशासन से नियन्त्रित रहे ताकि इस प्रक्रिया में काम करने की आदत नष्ट न हो जाय। यह भारतीय मजदूर संघ की यूनियन्स का अनुभव है कि एक अनुशासित मन ट्रेडयूनियन अथवा प्रबन्ध गतिविधियों के लिये समान रूप से आवश्यक है और जब दोनों पक्षों द्वारा कोई स्थित ली जाती है जिसके अन्तर्गत अधारभूत स्वभाव के अनुशासन की आदतों को दूषित नहीं किया जाता तब यूनियन द्वारा नियम के अनुसार काम अथवा अन्य अभ्यासों के अन्तर्गत की गई स्थित का उत्पादकता पर कोई खराब परिणाम नहीं पड़ता। ऐसी परिस्थिति में श्रमिक केवल मात्र अपनी भक्ति भाव ओर आज्ञाकारी भाव को काम से हटाकर यूनियन के नियम के पालन के लिये बदल लेता है। इसलिए वह अपनी मानसिक क्षमताओं पर खराब प्रभाव नहीं पड़ने देता और ज्यों ही यूनियन उपयुक्त निर्णय लेती है श्रमिक अपनी क्षमताओं को पुन: काम पर लगा सकता है। एक जागरुक यूनियन इस प्रकार के कदम तभी उठाती है जब वह यह महसूस करती है कि उसके सदस्यों का लाभ अन्ततोगत्वा उत्पादकता से सम्बन्धित है और यूनियन उत्पादकता के मनोबल को स्थायी रूप से कम करने को बरदाश्त नही कर सकती। वस्तुत: इस महत्वपूर्ण भूमिका को प्रभावी रूप से निभाने के लिये ट्रेडयूनियन को एक तकनीकी विशेषज्ञ से सज्जित होना चाहिए। बहुत सी भूतकालीन यूनियन्स के पास केवल मात्र संगठनात्मक और कानूनी अंग रहे हैं भविष्य में यूनियन को एक तकनीकी अंग भी रखना चाहिये जिसके पास दिशा देने के अधिकार हों।

इस अध्याय को हम यह कर समाप्त करेंगे कि उत्पादकता अधिकांश रूप में दृष्टिकोण से है, वैज्ञानिक प्रकृति अथवा स्वभाव को पैदा करने से सम्बन्धित है वनस्पति इसके कि केवल मात्र निर्जीव मशीनों और कागजी कार-वाइयों के अनुसार अपने को ढाकने से सम्बन्धित है और उत्पादकता सम्बन्धी मोर्चे पर सक्रिय गतिविधियों में श्रमिक मनस्थिति और ट्रेडयूनियन आन्दोलन की शक्ति और गुणों को एक महान भूमिका निभानी है। इसलिये इस मनो

भूमिका को व्यापक रूप से सम्मानित किया जाना चाहिये और मानवमन के एकात्म ज्ञान द्वारा ठीक रूप से समझा जाना चाहिये जिसकी आधारभूत खोज आर्थिक उद्देश्यों के लिये ही नहीं है यद्यपि या स्पष्ट शब्दों में हमेशा उसको कार्यान्वित नहीं कर पाता है जिसकी ओर यह उद्देश्य बनाये हुये हैं। यहाँ अर्थशास्त्र को अन्य विज्ञानों से सम्बन्धित करने की आवश्यकता महसूस होती है भिन्न भिन्न उत्पादकता तरीकों के प्रभावी ढंगों को प्रस्तुत करने में हमारे द्वारा प्रस्तुत सामाजिक दिशा को इस रूप से बनाया गया है जो एक व्यापक राष्ट्रीय अभियान के लिये सर्वप्रथम आधारभूत प्रारम्भ करने का बिन्दु है और जो कि परम्परागत समाज को भविष्य की मान्ताओं के अनुसार बदलने की पेचीदा समस्या के लिये एक एकात्म पद्धति पर आधारित है।